डॉ० चण्डेश्वर झा

मिथिला विभूति [illegible]

डा० चण्डेश्वर झा

प्रथम संस्करण— १९८७ : सर्वाधिकार : लेखक

प्रकाशक : डा० चन्डेश्वर झा

मुद्रक : कंसल प्रिंटर्स, नैनीताल

मूल्य : बीस रुपये मात्र – २०.००

"Life in not bed of rassece, So We Should labour hards."

मिथिला विभूति मांगन

डा० चण्डेश्वर झा ने "[illegible]' पर जो पुस्तक लिखी है वह पूर्ण रूप से प्रामाणिक एवं सत्य है । "[illegible]" अपने समय के अद्वितीय कलाकार थे । उनके जीवन चरित्र पर सर्वप्रथम प्रकाश देकर श्री झा ने सराहनीय कार्य किया है ।

पदमश्री सियाराम तिवारी

आशीर्वाद

डा० चण्डेश्वर झा, अध्यक्ष, स्नातकोत्तर संगीत एवं नाट्य शास्त्र विभाग, ल०ना० मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा के संगीत-स्नेह एवं तज्जनित निष्ठा भाव से मैं पूर्ण प्रभावित हूँ। वैसे तो गायन-वादन के क्षेत्र में कई संगीत महारथियों के नाम लोगों की जिह्वा पर हैं, लेकिन अभिलेखों के आधार पर शोधकर संगीत आकाश के नक्षत्रों को प्रबन्ध-लेखन द्वारा जन-मन तक पहुँचाकर इन्होंने संगीत और संगीतकारों के प्रति सम्मान व्यक्त किया है। इनका प्रकाशित प्रबन्ध इस क्षेत्र में हस्ताक्षर है। अधिकाधिक जानने और सीखने की प्रवृति इन्हें अविरल शोध कार्य हेतु अनुप्रेरित करती रही है।

"मिथिला की संगीत-विभूतियों" पर प्रकाश देकर इन्होंने इस क्षेत्र को एक नया आयाम दिया है। साहित्य शिल्पी की तरह संगीत शिल्पी को भी डा० झा शृंखलाबद्ध करना चाहते हैं। संगीत एवं संगीतज्ञ की उपेक्षा न हो एतदर्थ, इनका योगदान स्तुत्य है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मिथिला के संगीत इतिहास में 'मिथिला विभूति मांगन" पुस्तक बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगी। मैं इनके इस सत्-प्रयास के लिए इन्हें हृदय से आशीर्वाद देता हूँ।

पं० रामाश्रय झा

दो शब्द

संगीत एवं संगीतज्ञ दोनों प्राचीनकाल से ही समाज-मध्य महत्वपूर्ण अंग माने गये हैं। ऋषि-मुनि, देव, गन्धर्व, यक्ष-किन्नर सबों ने तपस्या कर जीवन बन्धन से छुटकारा लेकर मोक्ष प्राप्त किया है। संगीत साधकों ने संगीत सागर में रहकर साधना करते हुए जन जीवन को रसान्वित कर 'स्व' एवं 'पर' सबों को मोक्ष मार्ग हेतु अग्रसारित किया है। नाद ब्रह्म के पुजारी ने लोक-परलोक प्रयाण करने का साधन संगीत को ही बनाया है। संगीत मात्र लोक रंजन का साधन ही नहीं, वह सच्चिदानन्द प्राप्ति का साधन है। ईश्वर प्राप्ति के साधनों में संगीत से बढ़कर दूसरा नहीं। भगवान विष्णु ने इसी कारण निम्नलिखित वाक्य नारद से कहा है—

"नाहं वसामि बैकुण्ठे
योगीनां हृदये न च।

मद्भक्ता यत्र गायन्ति
तत्र तिष्ठामि नारद्॥

—भर्तृहरि।

आत्मा तथा परमात्मा का साक्षात्कार कराने का यह सर्वोत्तम साधन है। संगीत न किसी देश न किसी काल और न किसी पात्र का माना गया है। यह किसी भी सीमा रेखा से मुक्त है। संगीत न किसी जात का है न किसी वर्ग विशेष का है। यह उन्मुक्त है बंधन रहित है। पूर्व जन्म का संस्कार एवं व्यक्ति के कर्म से संगीत की प्राप्ति होती है।

मैं अपने को एक अन्वेषक मानता हूं। मेरे प्रथम गुरु श्री निहालेन्दु मजुमदार कलकत्ता ने मेरी संगीत पिपासा को देख मुझे संगीत के स्वरों से अवगत कराया। पश्चात स्वनाम धन्य पद्मश्री रामचतुर मल्लिक एवं विदुर मल्लिक (अमता दरभंगा घराना) ने ध्रुपद एवं धमार की कठोर गायन शैली की तालीम दी। इन गुरुजनों से प्राप्त संगीत की यत् किंचित शिक्षा ही मेरी पूंजी है।

सन् १६७७ में पीएच० डी० की उपाधि प्राप्त की। इस शोध के क्रम में मैंने सारे मिथिलांचल में भ्रमण किया। मिथिला का संगीत एवं संगीतज्ञ यही मेरे शोध के मुख्य विषय थे, जिन पर दृष्टिपात कर "मिथिलाक लोक [illegible] संगीत [illegible] [illegible]" नामक शोध प्रबन्ध मैंने पूर्ण किया। पचगछिया (सहरसा) की संगीत परम्परा के अध्ययन-क्रम में गन्धर्व पुत्र "माँगन" ने आकर्षित किया। जनमानस के स्मृति पटल पर रहते हुए भी उनके बारे में वृहत और प्रामाणिक जानकारी कहीं किसी के पास उपलब्ध नहीं थी। मैं माँगन के विषय में बहुत कुछ जानना चाहता था किन्तु जानकारी देने वालों का अभाव था। १६८४ ई० में मैं मांगन के गाँव पचगछिया गया। मेरे साथ श्री रामबहादुर सिंह संगीत शिक्षक राजकीय कन्या विद्यालय, भी सहरसा गये। उन्होंने जो सहयोग किया वह चिरस्मरणीय है। उन्हीं के सहयोग का फल है कि मैं कुछ सामग्री मांगन के बारे में बटोर सका।

मांगन के शिष्य समुदाय में श्री गणेश कान्त ठाकुर एवं श्री उपेन्द्र नारायण यादव का स्थान महत्वपूर्ण है। इन्होने अपने गुरू के विषय में बहुत सार जानकारी दी जिस कारण इनका मैं पूर्ण रूप से उपकृत हूँ। पचगछिया स्टेट के श्री मिहिरेन्द्र नारायण सिंह (ददन जी) के यहां भी गया। उन्होंने भी अपना बहुमूल्य समय देकर उक्त विषय में सहयोग दिया। एतदर्थ मैं उनका भी आभारी हूँ।

भारतीय स्तर के कलाकारों की चर्चा तो संचित है। कई पुस्तकें हैं जिनके पृष्ठों में सभी उल्लिखित हैं। मिथिला की कई ऐसे विभूतियां हुई हैं जिनकी चर्चा तक नहीं होती। एक अहं सवाल मेरे मन में हमेशा उठता रहा है कि साहित्य के क्षेत्र में रहने वाले साहित्यकार दस-बीस कविता एव गीत लिखने के पश्चात लेखकों की शृंखला में जुड़ जाते हैं एवं उनकी चर्चा सदैव साहित्य के छात्र एवं विद्वान करते रहते हैं। दुर्भाग्य की बात है कि संगीत के क्षेत्र में कतिपय विभूतियों का उल्लेख नहीं है और न उनके जीवन पर प्रकाश देकर उसे पुस्तकाकार में प्रस्तुत ही किया जाता है। जिन्दगी भर वह श्रोता को अपनी गायन से रंजित करता है किन्तु मरणोपरान्त उसकी चर्चा तक नहीं की जाती। इस कचोट के कारण मैंने संगीत अन्वेषक के रूप में यह मुनासिब समझा कि अतीत की ओर झाँक कर देखूं कि मिथिलांचल की संगीत

विभूतियों ने स्वान्तः सुखाय तक सीमित रखा या आने वाली पीढ़ी के लिए भी कुछ किया। मैंने उक्त विषय वस्तु पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। जो कुछ भी मैंने व्यक्ति से या समाज से मिथिला विभूति मांगन के विषय में जानकारी ली है, उसे इस पुस्तक में रख रहा हूँ। आने वाले समय में संभव है कि और भी बातें प्रकाश में आ सके।

शिवरात्रि १९८७ डा० चण्डेश्वर झा
संगीत भवन, मिर्जापुर,
दरभंगा

रायबहादुर लक्ष्मीनारायण सिंह की वंशावली
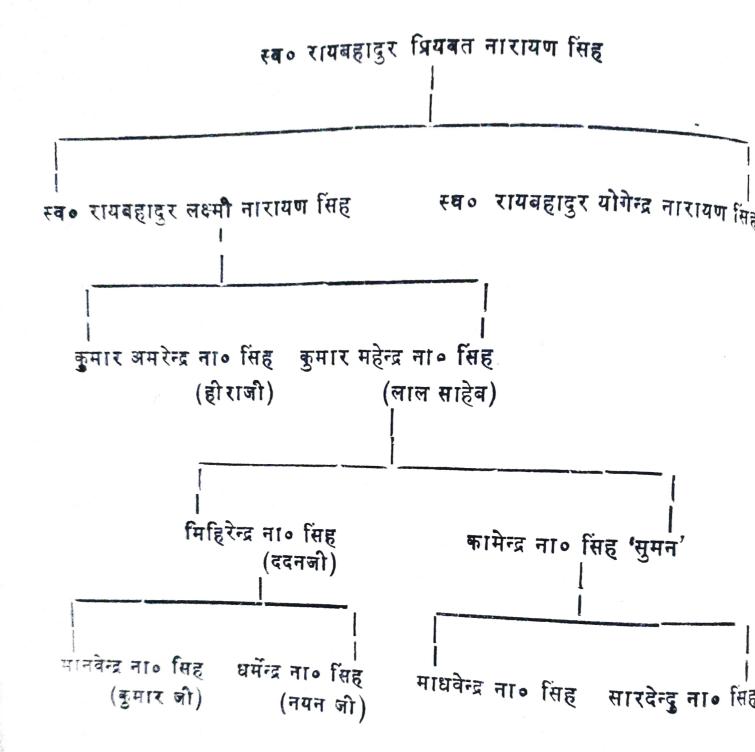
स्व० बाबू ब्रह्म नारायण सिंह की वंशावली

स्व० पंचम सिंह
|
स्व० आलम सिंह
|
स्व० लक्ष्मी सिंह
|
स्व० ब्रह्मनारायण सिंह
|
श्री वैद्यनाथ नारायण सिंह (नत्थू बाबू)
|
श्री शम्भु नारायण सिंह

"If I can stop one heart from breaking, I shall not live in vain, If I can ease one life the aching, or cool one pain, or help one fainting robin unto his nest again, I shall not live in vain Emily Dickinson".

मिथिला विभूति मांगन की वंशावली

स्व० सर्वजीत कामति
|
स्व० शंकर कामति
|
स्व० मांगन लाल
|
स्व० लड्डूलाल
|

श्री गणेश महतो	श्री दिनेश महतो	श्री कामेश्वर महतो

मिथिला विभूति मांगन के शिष्य

१- बटुक जी झा
२- तिरो झा
३- शिवन झा
४- बाल गोविन्द झा
५- युगेश्वर झा
६- माधव झा
७- रामजी दास
८- धर्म देव सिंह
९- राधो झा
१०- पुनो पोद्दार
११- सुन्दर पोद्दार
१२- अधिक लाल पोद्दार
१३- गणेश कान्त ठाकुर
१४- उपेन्द्र यादव
१५- दुर्गादत्त झा
१६- सत्यनारायण झा
१७- लड्डूलाल
१८- कमला कान्त झा
१९- लक्ष्मी मंडल
२०- परशुराम झा
२१- बलराम झा

उन्नीसवीं शताब्दी का अन्त हो रहा था। भारत गुलामी की जंजीर में बंधा था। चारों तरफ आजादी के दीवाने जान हथेली में लिए अंग्रेजों से टक्कर ले रहे थे। सामन्तवादी भी सामन्ती मोह छोड़कर आजाद भारत की कामना कर क्रान्ति की धधकती चिता में कूद रहे थे। साहित्यकार, संगीतकार, समाजसुधारक सभी का एक ही राग एक ही ताल था–"भारत की आजादी"। सारा देश अस्त व्यस्त था। हमारी प्राचीन संस्कृति एवं अन्य मान्यताओं पर विदेशियों के लगातार आघात हो रहे थे। जनजीवन में आक्रोश भरा था। ऐसी विषम स्थिति में एक महान संगीत-पुजारी का प्रादुर्भाव हुआ सहरसा जिला के पचगछिया गाँव में जिनका नाम था माँगन।

मांगन की जन्म-तिथि के बारे में निश्चितता का उल्लेख कहीं नहीं है। अन्वेषण के क्रम में कई व्यक्तियों से मिला, कई स्थानों पर भटका किन्तु जन्म-तिथि की निश्चितता का किसी ने भी ठोस प्रमाण प्रस्तुत नहीं किया। मांगन के परम शिष्य उपेन्द्र यादव से तिथि २-११-८५ को अखिल भारतीय संगीत-शिक्षक-सम्मेलन, पटना में बातचीत हुई। मांगन से संबन्धित मेरे अनेक प्रश्न थे जिनके क्रम में उन्होंने यह स्वीकार किया कि उनका देहावसान १९४४ की कार्तिकी पूर्णिमा की पुण्य तिथि में हुआ। उस समय उनकी आयु ५० साल की थी। अतः निःसन्देह उनकी जन्म तिथि १८९४ ई० कही जायगी।

मांगन जात के कुर्मी थे। इनके दादा का नाम सर्वजीत कामति एवं पिता का नाम शंकर कामति था। सहरसा जिले का पँचगछिया गाँव इनका जन्म स्थान था। यह बड़ा ही प्रसिद्ध गाँव है। सामन्ती प्रथा का प्रतीक यह गाँव बिहार राज्य का एक गौरव है। राय बहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह एवं राय बहादुर योगेन्द्र नारायण सिंह को बिहार कभी भी भूल नहीं सकता। संगीत, साहित्य एवं कला के क्षेत्र में दोनों ही व्यक्तियों के नाम सदा गौरव एवं श्रद्धा के साथ लिए जाते रहेंगे।

पँचगछिया विशाल गांव है। इस गांव के अन्तर्गत माँगन का जन्म स्थान है, जिसका विवरण क्रमशः दिया जा रहा है।

उत्तर में — श्री लक्ष्मीकांत झा
दक्षिण में — श्री विद्या नारायण सिंह
पश्चिम में — श्री कुलदीप नारायण सिंह
पूरब में — सड़क

पक्की सड़क के पश्चिम में श्री बुटरू झा, पिता श्री राजेश्वर झा के आवास के सामने से गली में प्रवेश करने के बाद स्व० ब्रह्म नारायण सिंह के दरवाजे से होते हुए श्री विरेश्वर झा, श्री गंगा सिंह, श्री विद्यानारायण सिंह आदि के आवास के सामने से होकर श्रद्धेय स्व० मांगन के वास स्थान पर जाया जा सकता है।

शंकर कामति के समय में जो मकान थे वे मिट्टी से निर्मित भित्ति, छप्पर खड़ आदि के थे। बिहार में (खास कर मिथिला में) खवास जात एक पुरानी जात है जिसका पेशा चाकरी है। राजे महाराजे एवं रईशों के यहाँ ये नौकरी के साथ-साथ उनकी खवासी भी करते आये हैं आर्थिक दृष्टि से यह विपन्न जाति है। मिथिला के गांवों में इस जाति की संख्या शहर से कहीं अधिक है। मिथिला में लोग इस जाति को खवास के नाम से जानते हैं। मांगन के पूर्व पुरुषों ने अपने नाम के आगे "कामति" लगाया। "कामति" के बाद "लाल" एवं "लाल" के बाद ये अभी महतो के उपनाम से चर्चित एवं विदित हैं।

माँगन का बचपन भैंस की चरवाही एवं ड्योढ़ी की खवासी में बीता। पिता के साथ-साथ वे भी ड्योढ़ी जाया करते थे। खानदानी पेशा के अनुरूप ही उन्होंने अपने को बना लिया। बच्चों के पढ़ने के लिए गावों में विद्यालय नहीं थे जिस कारण मांगन को भी शिक्षा से वंचित रहना पड़ा। उन्होंने कभी विद्यालय का मुँह नही देखा। ब्रह्म नारायण सिंह के यहां रहकर वे नटुआ एवं नाच की ओर आकृष्ट हुए। पचगछिया से उत्तर परसौनी गांव में उनदिनों मोती नाम का एक नटुआ था जो नाच और रासलीला करता था। सन्ता भी एक ऐसा ही नटुआ था। इन दोनों के संरक्षण में माँगन नाच एवं गाना भी सीख रहे थे। दरबार से दोनों को वेतन भुगतान किया जाता था। उमाकान्त की थियेटर पार्टी भी ड्योढ़ी में बराबर आती थी। मांगन ने इस थियेटर में कुछ दिन रहकर गीत और नाच की शिक्षा ग्रहण की। स्वय उमाकान्त मांगन के गले से निकली स्वर-लहरी से आकृष्ट हुए। उन्हें ऐसा प्रतीत हो गया था कि आने वाले दिनों में मांगन एक अद्वितीय गायक बनेगें।

बचपन बीत रहा था। पुरानी धारणा एवं प्रथानुसार उनकी शादी कम उम्र में ही करा दी गई। अब उन्हें गृहस्थ जीवन जीने के लिए अपने साथ परिवार के दूसरे सदस्यों का उत्तारदायित्व भी समझ में आने लगा। वह

राजे-रजवाड़ों की शरण में चले गये । पँचगछिया में उन दिनों बड़ी-बड़ी हस्ती वाले लोग थे। उनके निवास स्थान को ड्योढ़ी कहा जाता था। बाबू ब्रह्म नारायण सिंह एवं बाबू लक्ष्मी नारायण सिंह की प्रधान ड्योढ़ी थी वहाँ राजा एवं रजवाड़े की कोटि में थे दोनों। किसी विशेष अवसर पर दरभंगा के महाराज भी उनके यहां आमंत्रित हुआ करते थे ।

सर्वजीत कामति एव शंकर कामति मुख्य रूप से ब्रह्म नारायण सिंह के दरबार में रहकर अपने परिवार का भरण-पोषण किया करते थे । मांगन भी मूल रुप से इसी दरबार के एक अंग थे। बाबू ब्रह्म नारायण सिंह एवं बाबू लक्ष्मी नारायण सिंह एक ही परिवार के थे जो कालान्तर में अलग-अलग हो गये थे, ऐसा माना जाता है। पचमहला के नाम से जाने - माने राजपूत सहरसा के पँचगछिया गाँव में आकर बस गये थे। अच्छी खासी जमींदारी थी इस परिवार की। परिवार में सदस्यों की संख्या बढ़ती गई। एक ही ड्योढ़ी से कई ड्योढ़ियां बन गई। आपसी बँटवारे से एक-दूसरे के प्रति द्वेष एवं घृणा का भाव उत्पन्न होता गया । द्वेष और घृणा ने इस परिवार को झकझोड़ दिया। प्रतिशोध की भावना ही उनके भविष्य का लक्ष्य बनकर रह गया ।

बाबू लक्ष्मी नारायण सिंह संगीत के एक निविष्ट विद्वान थे। गायन, वादन एवं नृत्य इन तीनों विद्याओं पर उनका समान अधिकार था। उनके गुरु का नाम पं० विश्वनाथ पाठक था। संगीत चर्चा बराबर ही उनके दरबार में हुआ करती थी। देश के बड़े - बड़े कलाकार आमन्त्रित होते थे। जयपुर, बनारस, दिल्ली, आगरा, पटियाला एवं ग्वालियर घराने के कलाकार राय साहेब के यहाँ आया करते थे। गायन वादन एवं नृत्य उपस्थित कर दरबार की शोभा में चार चाँद लगाते थे। दरबार से विदाई एवं सम्मान प्राप्त कर कलाकार लौटते थे। अंग्रेजी हुकूमत ने बाबू लक्ष्मी नारायण सिंह को राय बहादुर की उपाधि से अलंकृत किया था। मृदंग एवं हारमोनियम में राय साहेब अद्वितीय थे ।

प्रातः एवं संध्या राय बहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह के दरबार में महफिल सजती थी एवं चोटी के कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करते थे। मांगन भी राय बहादुर के यहाँ पहुँच गये थे । आरम्भ में वह टहलू एवं खवासी

का काम करते थे। राय बहादुर की निजी सेवा माँगन का प्रधान कार्य था। संगीत की झंकार से सारा वातावरण झंकृत रहता था। उसी झंकार ने माँगन के हृदय के तार को आहत कर नाद ब्रह्म का जन्म दिया।

माँगन को संगीत की प्यास जगी। वे राय बहादुर लक्ष्मी नारायण की सेवा कर निश्चिंत होते थे तो अकेले में कुछ गुन-गुनाते रहते थे। कलाकारों के द्वारा गाये गये गीतों को वे अपने गले में उतारना चाहते थे। प्रत्येक दिन संगीत के मधुर स्वर मांगन के कानों में सरसता प्रदान करता गया और वह संगीत सागर में विचरण करने लगे। हर राग के निश्चित स्वर, हर राग की वन्दिश, इन्ही में खो गये मांगन।

रायबहादुर को माँगन के विषय में कोई जानकारी अबतक नहीं हो पायी थी कि मांगन कुछ गुन-गुनाता भी है। माँगन में संगीत की भावना जग गई है या वह कुछ गुन - गुनाता है इसका एहसास राय बहादुर को कैसे हुआ इसकी एक रोचक घटना है।

कुछ लोगों का कहना है कि एक दिन मांगन दरबार का बर्तन मल रहे थे तो वे किसी राग के बन्दिश को उसी लय एवं ताल में कहते जा रहे थे। राग में लगने वाले स्वरों में कोई अन्तर नहीं था हूबहू राग एवं उसकी वन्दिश का उपस्थापन करते जा रहे थे। राय बहादुर ने अपने कानों से गुन - गुनाया हुआ वह स्वर सुना। वे मुग्ध हो गये। चकित रह गये मांगन की स्वर परख देखकर। उन्हें ऐसा लगा कि यदि इसे संगीत की तालीम दी जाय तो यह एक महान् गायक बन सकता है। पास बुलाकर मांगन से राय बहादुर ने कहा संगीत सीखोगे ? मांगन ने संकोचवश सर झुकाकर "हाँ" कह दिया। अब क्या था राय बहादुर की कृपा हो गई मांगन पर। आदेश मिल गया उन्हें महफिल में जाने का। पहले उन्हें महफिल में जाने तक का अधिकार नहीं था अब उन्हें महफिल में गाने का अधिकार मिल गया। पहले वे छुपकर एकांत में गुन - गुनाते थे, अब उन्होंने महफिल में गाने का अधिकार पा लिया। संगीत का प्यासा वह युवक अब संगीत सागर में प्रत्यक्षत: आ गया।

संगीत शिक्षा के प्रथम चरण में राय बहादुर ने मांगन को शुद्ध स्वरों पर नियंत्रण रखने के लिये प्रेरित किया। दूसरे चरण में बिकृत स्वरों पर

नियंत्रण एवं तीसरे चरण में अलंकारों के अभ्यास पर बल दिया। इस प्रकार कुछ ही वर्षों में मांगन की आवाज तीनों सप्तकों में दौड़ने लगी। षड़ज की साधना से मांगन के गले में बल आ गया। बिना किसी दिक्कत के ही उनका स्वर प्रत्येक स्वर पर पहुंचने लगा। खयाल एवं ठुमरी गायन में राय बहादुर ने मांगन को तालीम दी। मांगन की साधना में दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति होने लगी। देश के चौटी के कलाकार दरबार में आकर गायन प्रस्तुत किया करते थे। मांगन दरबार में बैठकर सभी कलाकारों का गायन सुनते थे। यदि किसी का गायन उन्हें खूब आकृष्ट कर लेता था तो उस कलाकार से महफिल के बाद मिलकर पुनः गायन सुनकर अपने गले में उतार लेते थे। राय साहेब का प्रिय पात्र समझकर कोई भी कलाकार मांगन के आग्रह को नकारता नहीं था। प्रातः एवं संध्या दोनों समय पाँच - पाँच घटे मांगन रियाज करते थे। रियाज एवं प्राकृतिक देन दोनों के आधार पर मांगन कुछ ही वर्षों में संगीत पंडित बन गये। कहा जाता है कि राय बहादुर मांगन के गले में गर्मागर्म हलवा कपड़े में बांधकर लपेट देते थे और तब स्वर सधवाते थे। राय बहादुर ऐसा इसलिए करते थे कि मांगन की आवाज की पहुँच तार सप्तक तक हो जाय साथ ही साथ गले में कोमल - कमनीयता भी आ जाय।

मांगन का स्वरूप लाल गोराई, मूँछ ऐंठी हुई, बाल घुंघराला, कद ५ फीट छो इंच तथा शरीर दोहरा था। वे दाहिने कान में कनौसी, बस्त्र में धोती एवं कुर्ता पहनते थे तथा दरबार में मुरेठा भी लगाते थे। हाफ जूता भी पहनते थे। मधुर कंठ, संयमित वैष्णव जीवन, एकादशी व्रत धारक, वायु रोग से पीड़ित, हुक्का - चीलम पीना उनका एक मात्र अमल था। स्वभाव के संकोची थे। ब्राह्मण के परम भक्त थे। जिस आसन पर ब्राह्मण बैठते थे उसपर वे नहीं बैठते थे। मधुर भाषी तथा अल्पभाषी थे। सतरंज के प्रेमी थे। खयाल अंग के गायन एवं ठुमरी में महारत प्राप्त हो गई थी मांगन को। ग्वालियर घराने का प्रभाव मांगन के गायन में पूर्णतया झलकता था। ठुमरी गायन में उस्ताद जमरुद्दीन खाँ (ठुमरी सम्राट) एवं उस्ताद मोजुद्दीन खाँ भारत के दो प्रधान हस्ती माने गये हैं। बिहार में मांगन से बढ़कर ठुमरी गायन में तत्काल किसी दूसरे का नाम नहीं था। उनकी गले की कशिश, जादुई मोहक आवाज, गजब की पेश बन्दियाँ और कल्पना के लहजे के अंदाज ने सोने में सोहागा वाला

काम किया । नाद ब्रह्म का वह पुजारी, आवाज का वह जादूगर और दर्द की तस्वीर तथा अपने फन में माहिर एक शख्शियत - जिसका नाम था माँगन । गाने में गले की मुर्कियाँ, खटके और शोख हरकतें संगीत और सुर के प्रेमियों को वाह कहने पर मजबूर कर देती थी । शास्त्रीय गायन के अलावे विद्यापति गीत, कजरी, चैती, निर्गुण, होली जैसी लोक शैलियाँ विकसित कर उन्होंने उसे अपने सुरों से सींचा । विद्यापति गीत को ठुमरीनुमा बनाकर उसका उपस्थापन कर उन्होंने सुर-संगीत की सरलता - सहजता को एक नया आयाम दिया । संगीत के विभिन्न पहलुओं को गले में संवारने के लिए उन्होंने वर्षों रियाज किया, अनेकानेक कष्ट सहे, खानदानी संकीर्ण भावनाओं से संघर्षकर उसका परित्याग किया । इस तरह सुर लगाने का गजब ढंग था माँगन का । ठुमरी गायन में पूरब अंग की शैली झलकती थी ।

दस-पन्द्रह वर्षो की कठिन तपस्या ने मांगन को एक सिद्ध कलाकार बना दिया । १९३० ई० के लगभग लखनऊ में एक संगीत सम्मेलन का आयोजन किया गया था । देश के चोटी के कलाकार आमन्त्रित थे । सम्मेलन में राय-बहादुर निर्णायक मंडल के विशेष सदस्य से रूप में आमंत्रित थे । रायबहादुर लक्ष्मीनारायण के साथ उनके प्रिय शिष्य मांगन भी उस सम्मेलन में गये थे । मांगन को कार्यक्रम प्रस्तुत करना था ।

सम्मेलन के एक प्रातः में उस्ताद फैयाज खां का कार्यक्रम था । खां साहेब ने राग जौनपुरी में गायन प्रस्तुत किया था, जिसके बोल थे "फुलवन की गेंद न मैका मार" । दूसरे दिन प्रातः माँगन ने उक्त राग एवं उक्त पद ही अपने गायन में प्रस्तुत किया । फैयाज खां साहेब को मांगन का उक्त गायन सुनकर बहुत ही आनन्द एवं आश्चर्य हुआ । खां साहेब जहां ठहराये गये थे वहीं बगल में माँगन भी थे । तीसरे दिन खां साहेब लूंगी एवं गंजी पहने ही मांगन के निकट आये और बहुत सारी बातें करने के बाद मांगन की प्रशंसा कर अपनी ओर से कुछ बिदाई भी दी । लखनऊ संगीत आयोजन के बाद माँगन देश के विभिन्न भागों में गायन हेतु आमंत्रित किये जाते रहे । मांगन की प्रसिद्धि एवं शोहरत से रायबहादुर बहुत ही प्रसन्न रहने लगे । अपनी तालीम पर उन्हें खुद भी गौरव जान पड़ने लगा । मांगन जैसे शिष्य को पाकर उन्हें नाज होने लगा । मणिकांचन का यह अनुपम संयोग बेमिसाल था ।

रायबहादुर लक्ष्मी नारायण का माँगन पर इतना अधिक स्नेह बढ़ता

गया कि वे मालिक एवं सेवक का रिस्ता भूल गये। रायबहादुर राग की बंदिश देते एव फिर मांगन से सुनते। गुरू एवं शिष्य का अगाध स्नेह एवं प्रेम दोनों के बीच में अभेद्यसा हो गया। एक की अनुपस्थिति दूसरे को पीड़ा देने लगी। मांगन के अराध्य राय बहादुर बने और वह स्वय अपनी गुरू-भक्ति से आरूणी एवं एकलव्य जैसा शिष्य हो गये।

राय बहादुर बाबू लक्ष्मी नारायण सिंह के यहां प्रत्येक दिन सुबह शाम महफिल लगती थी। देश के जाने-माने कलाकार पहुंचते थे। गायनोपरान्त उन्हें विदाई एवं सम्मान प्रदान किये जाते थे। १९३० ई० में ही किसी दिन सियाराम तिवारी जी अपने पिता स्व० पं० बलदेव तिवारी के साथ राय साहेब के दरबार पचगछिया गये थे। स्व० पं० बलदेव तिवारी स्वय भी उस समय खयाल एवं ठुमरी के मशहूर कलाकार थे। माँगन जी से इनकी गाढ़ी दोस्ती थी वैसे उम्र में स्व० पं० बलदेव तिवारी कुछ बड़े थे। श्री सियाराम तिवारी की उम्र उस समय १०-११ साल की ही थी।

श्री सियाराम तिवारी मांगन का गायन सुनकर मुग्ध हो गये। दूसरे दिन पुन: इन्हें पिता के साथ दरवार जाने का अवसर प्राप्त हुआ। एक बहुत ही वयोवृद्ध वीणावादक कलाकार का कार्यक्रम था। दरबार में आते ही उन्होंने देखा कि कुछ कलाकार उनका पांव छू-छूकर प्रणाम कर रहे हैं। राय बहादुर भी अपने सिंहासन से उठकर उनको नमस्कार कर उन्हें यथा स्थान बिठा दिया। तिवारी जी को बड़ा आश्चर्य हुआ कि ये कौन कलाकार हैं ? उस वयोवृद्ध वीणावादक का वादन शुरू हुआ आलाप में ज्यों-ज्यों बढ़त होती गई तिवारी जी ने देखा कि कुछ लोग तो स्तब्ध थे और कुछ की आँखों से अश्रुधारा बह रही थी। स्वर की झंकार एवं लहर में सभी डूब गये थे। श्री तिवारी ने स्वीकार किया है कि वैसा वीणावादन अब सुनने को नहीं मिल रहा है। कार्यक्रम समाप्ति के बाद श्री तिवारी ने अपने पूज्य पिताजी से पूछा कि ये कौन कलाकार थे ? मशहूर वीणावादक उस्ताद वजीर खां का नाम उन्होंने लिया। उस्ताद वजीर खाँ के ही शिष्य उस्ताद अल्लाउद्दीन खां साहेब एव इनके शिष्य प्रसिद्ध सितारवादक पदमभूषण पं० रविशंकर जी हैं। रायबहाहुर ने कार्यक्रम समाप्ति के बाद उस्ताद वजीर खां साहब को बहुत ही कीमती दुशाला और मुद्रा देकर सम्मानित किया। उस्ताद अलाउद्दीन खाँ के और भी चोटी के शिष्य हैं जिनके नाम क्रमश: अली अकबर खां (पुत्र) सरोद में,

निखिल बनर्जी सितार में, भी० जी० जोग वायलिन में, पन्नालाल बांसुरी में, स्व० राधिका मोहन मोइत्र – सरोद में, श्रीमती शरण रानी सरोद में। ज्योतिन भट्टाचार्य – सरोद में हैं ये सभी ऐतिहासिक पृष्ठों में स्वर्णाक्षरित हैं।

राय बहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह जहां संगीत के साधक एवं ग्राहक थे उसी जगह उनके सहोदर भाई राय बहादुर योगेन्द्र नारायण सिंह संस्कृत साहित्य के उदभट्ट विद्वान थे। सतरंज में महारत थी उन्हें। साहित्यकारों एवं कवियों से उनके यहां दरबार सुशोभित होता था। दोनों दरबारों की शोभा निराली थी।

ब्रह्म नारायण सिंह का संबंध लक्ष्मी बाबू के वनिस्पत राय बहादुर योगेन्द्र नारायण सिंह से विशेष मधुर था। राय बहादुर योगेन्द नारायण सिंह का निजी संबंध भी लक्ष्मी बाबू से विशेष नही था। किसी तरह दोनों भाई में संबंध का निर्वाह किया जा रहा था। धन-सम्पत्ति का आपसी बटवारा दोनों भाई के बीच में खाई उत्पन्न करता जा रहा था। ब्रह्म नारायण सिंह का उठना बैठना विशेषत: रायबहादुर योगेन्द्र नारायण सिंह के साथ था।

मांगन के पूर्वज ब्रह्म नारायण सिंह के दरबार से विशेष रूप से उपकृत थे जिस कारण माँगन भी ब्रह्मनारायण सिंह को बाबू कहकर पुकारा करते थे। अपने पिता शंकर कामति से विशेष महत्व वह ब्रह्म नारायण सिंह को ही देते थे। राय बहादुर लक्ष्मी नारायण को जहां वह 'गुरू साक्षात परब्रह्म' सा मानते थे वहीं ब्रह्म नारायण सिंह को पिता का दूसरा रूप समझते थे।

एक समय रायबहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह एवं रायबहादुर योगेन्द्र नारायण सिंह दोनों भाई अपने ससुराल चन्द्रगढ़ गये। चन्द्रगढ़ जो (नबीनगर) जिला औरंगाबाद के अन्तंगत है। दोनों भाइयों के साथ ब्रह्म नारायण सिंह एवं मांगन भी गये थे। इन लोगों के स्नान के बाद एक कन्धे पर दोनों भाई की धोती एवं दूसरे कन्धे पर ब्रह्म नारायण सिंह की धोती लेकर सूखने देने के ख्याल से मांगन निकले। राय बहादुर लक्ष्मी बाबू ने पूछा कि दो धोतियों के अलावा तीसरी धोती किसकी है? बाबू की धोती है मांगन ने कहा। लक्ष्मी बाबू ने कहा कि मुझको छोड़ दूसरा बाबू भला कौन है? मांगन के द्वारा कहा गया "बाबू" शब्द ब्रह्म नारायण सिंह की ओर संकेत करता था। राय बहादुर बहुत ही क्रुद्ध हुए। मांगन की उस भावना से वे अवगत हुए। उनकी

श्रद्धा एवं विश्वास का आधार जैसे डोल गया।

पंचगछिया उन दिनों भागलपुर जिलान्तर्गत था। सारा काम-काज का सम्पादन वहीं से होता था। सहरसा को तो संभवतः अनुमंडल का भी दर्जा प्राप्त नही था। भागलपुर जिला परिषद के पार्षद अथवा अध्यक्ष पद के लिये चुनाव होना था। ब्रह्म नारायण सिंह एवं राय बहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह के बीच आपसी मतभेद के साथ-साथ घृणा एवं द्वेष का वातावरण बन चुका था दोनों ही व्यक्तियों में उक्त चुनाव के कारण संघर्ष आरम्भ हो गया। राय बहादुर योगेन्द्र नारायण सिंह उस समय आनरेरी मजिस्ट्रेट के रूप में कार्यरत थे। ब्रह्म नारायण सिंह राय बहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह की मान्यताओं का विरोध कर रहे थे। इस प्रकार दोनों व्यक्तियों के बीच उत्तरोत्तर कटुता बढ़ती गई।

ब्रह्म नारायण सिंह जानते थे कि रायबहादुर लक्ष्मी बाबू पर मर्माहत प्रहार किस प्रकार किया जा सकता है। उन्होंने मांगन का कान भरना शुरु किया। छोटी सी रियासत से निकाल कर उन्हें दरभंगा राज प्रासाद का दरबारी गवैया बनाने का एक प्रलोभन दिया। मांगन के भी कुछ सपने थे कुछ अरमान थे बाबू की बात मानकर उन्होंने पचगछिया दरबार का परित्याग किया।

१९३२ ई० की बात है मांगन अपनी कर्मभूमि एवं साधना की पवित्र धाम को छोड़ राजदरबार की ओर उन्मुख हुए। दरभगा राज में आने के संबंध में दो तरह की बातें कही जाती हैं। दोनों का प्रसंगवश चर्चा करना आवश्यक होगा।

उन दिनों एक्समस (बड़ा दिन) के अवसर पर कलकत्ता में भारत के समस्त राजे-महाराजे इकट्ठे होते थे। उनके साथ उनके दरबार के विशिष्ट व्यक्ति भी साथ जाते थे। एक्समस के अवसर पर हार्स रेस, डौग रेस, गायन-वादन एव नृत्य इत्यादि प्रतियोगिताऐं हुआ करती थी। विजयी को अंग्रेज पदाधिकारियों के द्वारा पारितोषिक प्रदान किया जाता था। सारे देश में उसकी सोहरत होती थी।

कहा जाता है कि जब ब्रह्म नारायण सिंह पचगछिया से मांगन को लेकर चले तो वे दरभंगा न आकर कलकत्ता पहुंचे जहाँ दरभंगा महाराज के

छोटे भाई विश्वेश्वर सिंह अनेक दरबारी कलाकारों के साथ कानफ्रेंस में सरीक होने के लिये पहुंचे थे। कलकत्ता स्थित दरभंगा राज निवास जाकर सर्वप्रथम ब्रह्म नारायण सिंह ने राजा विश्वेश्वर सिंह के मोसाहेब लोगों से भेंट कर माँगन के बारे में जानकारी दी एवं मिथिला के पचगछिया से अपना परिचय प्रस्तुत किया। ऐसी चर्चा है कि पदमश्री रामचतुर मल्लिक के पिता राजित राम शर्मा मल्लिक ने मांगन के विषय की जानकारी राजा साहेब से दी एवं निवास पर एक संगीत गोष्ठी का आयोजन किया गया।

इस प्रसंग में एक महत्वपूर्ण विषय की चर्चा करना मुनासिब होगा कि उन दिनों राज दरबार में नाजिर के कुछ पद होते थे जिसका काम था गुणी कलाकार आदि को दरबार में प्रस्तुत करना। उन्हें ही कलाकार का चयन करना होता था। जब वह कलाकार की कला से अवगत हो लेता था तब कहीं राजा के पास उसकी सिफारिश करता था। गायक की विदाई की राशि से एक आना कमीशन के तौर पर नाजिर को दिया जाता था। अच्छे कलाकार की अच्छी अदायगी पर नाजिर की प्रशंसा एवं घटिया कलाकार की सिफारिस पर बेवकूफ की संज्ञा नाजिर को दी जाती थी। सर्वप्रथम छितिपाल मल्लिक को भी नाजिर का पद दिया गया किन्तु उन्होंने स्वीकार नहीं कर राजित राम के नाम का प्रस्ताव किया। संध्या का समय था मांगन ने अपना गायन गोष्ठी में प्रस्तुत किया। ठुमरी एवं विद्यापति संगीत की प्रस्तुति से मांगन ने राजा विश्वेश्वर सिंह के दिल पर जादू कर दिया। उसी क्षण राजा साहब ने मांगन को दरभंगा राजदरबार की शोभा हेतु उसकी नियुक्ति कर ली। कानफ्रेंस दस से पन्द्रह दिनों तक चलने वाला था। राजा साहेब के साथ छितिपाल मल्लिक, रामेश्वर पाठक एवं अन्य कलाकारों के साथ कई मोसाहेब भी थे।

मध्य कलकत्ता में जो संगीत कानफ्रेंस होते थे उनके कई नाम थे। "आल इण्डिया बंगाल कानफ्रेंस", "आल इण्डिया म्यूजिक कानफ्रेंस" "सदारंग-तानसेन कानफ्रेंस" "अल्लाउद्दीन कानफ्रेंस" इन्हीं नामों से कानफ्रेंस आयोजित होते थे। उपर्युक्त सभी कानफ्रेंसों में 'आल इण्डिया म्यूजिक कानफ्रेंस" सबसे श्रेष्ठ माना जाता था। इस कानफ्रेंस में भारत के सभी घरानों के कलाकार भाग लेते थे। गायन वादन एवं नृत्य इन तीन विद्याओं के चोटी के कलाकार आकर भाग लिया करते थे। ग्वालियर, दिल्ली, पटियाला, आगरा, जयपुर, बनारस इत्यादि के उनमें मुख्य स्थान थे।

कहा जाता है कि राजा विश्वेश्वर सिंह के द्वारा जब माँगन गायक के रूप में स्वीकार कर लिये गये तो दरभंगा राज दरबार की ओर से उपर्युक्त कानप्रेंस में गायन हेतु उन्हें कहा गया। मांगन गायन हेतु तैयार हो गये। कानप्रेंस में राग का नाम कहे बिना गायन आरम्भ कर दिया। श्रोता के मन में जिज्ञासा हुई कि कौन सा राग गाया जा रहा है? श्रोताओं को राग की पहचान नहीं हो पा रही थी। भिन्न-भिन्न रागों की कल्पना श्रोताओं के मन में उठ रही थी लेकिन वे किसी निश्चित राग के बताने में अपने आप को अक्षम पा रहे थे। मांगन का वह राग प्रस्तार चलता ही रहा। गायन के मध्य में गायक ने राग का नाम "गोपी बसन्त" कहा तब कहीं श्रोताओं का भ्रम दूर हुआ। "गोपी बसन्त' शुद्ध राग नहीं है। अनेक रागों की छाया उस पर पड़ती है इसी कारण श्रोताओं के मन में भ्रम उत्पन्न हो गया था। गायन बड़ा ही माधुर्यपूर्ण एवं आकर्षक रहा। श्रोताओं के बीच माँगन चर्चा के विषय बन गये।

दरभंगा राज के गौरव मय इतिहास की रक्षा माँगन ने अपने गायन से की। दरबार के अन्य कलाकारों के बीच माँगन यशस्वी बन गये। दूसरे ही दिन कलकत्ता के अनेक पत्र-पत्रिकाओं में माँगन की प्रशंसा छपी। राजा बहादुर का मन गद-गद हो गया अपने प्रिय कलाकार माँगन की गायन-प्रस्तुति पर। राजा साहेब ने अपने साथ दरभंगा लाकर कलाकारों के बीच माँगन को रखकर दरबार की शोभा में चार-चांद लगा दिये।

दूसरे पक्ष के लोगों का कहना है कि ब्रह्म नारायण सिंह माँगन को पंचगछिया से लेकर दरभंगा पहुंचे जहां मोसाहेब की सहायता पाकर राजा विश्वेश्वर सिंह के निकट जा सके। फिर मांगन का गायन सुनकर उन्हें अपने दरवार में रख लिया। दरबार में नित्य राजा साहेब मांगन का गायन सुनते थे। मांगन की गायन-प्रतिभा परख कर ही कलकत्ता के "आल इण्डिया म्युजिक कानफ्रेंस में राजा साहेब उन्हें ले गये।

उपर्युक्त दोनों ही चर्चायें प्रचलित हैं। किसी निश्चित उल्लेख के अभाव में दोनों चर्चाओं का उल्लेख करना आवश्यक हो गया।

१९३४ ई० के भुकम्प ने बिहार को बर्बाद कर दिया। धन-जन की अपार क्षति हुई। वर्षों बाद सारे राज्य में पुनः नव निर्माण कार्य प्रारंभ

किया गया । इसी भूकम्प के बाद दरभंगा राज के रामबाग अधीनस्थ दिलखुश बाग में फूस के घर में माँगनजी को निवास स्थान दिया गया । भूकम्प की उस विनाश लीला से अभी भी लोग आक्रान्त थे । ईटें एवं पत्थर के मकान बनाने से लोग डरते थे । इसी कारण मांगन को जो मकान दिया गया वह बाँस की झांझ एवं खड़ से निर्मित था (दिलखुश बाग रामबाग के दक्षिण में है) पीछे चलकर रामबाग के देवी मंदिर के निकट माँगन को निवास स्थान दिया गया । वह मकान भी टट्टी से निर्मित था ।

कुछ ही दिनों के बाद राजा बहादुर विश्वेश्वर सिंह ने बेला पैलेस से उत्तर (वर्तमान में पोस्टल ट्रेनिंग सेन्टर) तालाब के पश्चिमी मोहार पर मांगन के लिए एक मकान बनवा दिया तथा पुवरिया मोहार पर अजिम बक्स खां, मोलावक्स खाँ, (किराना घराना) अब्दुल गनी खाँ, सफी खाँ, बाबू खाँ, अहमद खां आदि कलाकार के निवास थे । मांगन के साथ उस मकान में बाल मुकुन्द झा (तबला वादक), बटुक झा, (हारमोनियम संगीतकार) एवं ब्रह्मनारायण सिंह रहते थे । ब्रह्मनारायण सिंह माँगन के अभिभावक के रूप में थे । उन्हीं के आदेश से मांगन कार्य सम्पादन किया करते थे । बाल मुकुन्द के ही शिष्य शुभंकरपुर, दरभंगा निवासी श्री कामेश्वर झा हैं । श्री युगल किशोर चौधरी (रामायणी) उर्फ गुदरी बाबू भी अपने को मांगन के शिष्य मानते हैं । उनका कहना है कि बेला खास महाबीर स्थान के निकट उनका किराया का मकान था जहाँ मांगन बराबर ही आया करते थे । मांगन पढ़े-लिखे नहीं थे जिस कारण महाकवि विद्यापति के पद के गूढ़ भाव उन्हें समझ में नहीं आती थी । गुदरी बाबू के यहाँ गूढ़भाव का अर्थ समझने के लिये वे आया करते थे । माँगन का कहना था कि जबतक पद के भाव हृदय में नहीं उतर जाते गायन रुचिकर एव आकर्षक हो ही नहीं सकते ।

राजा विवेश्वर सिंह का विशेष आदेश था कि कोई भी राजाश्रित कलाकार दरबार छोड़कर अन्यत्र गायन नहीं कर सकता । गायक को भी इस बात का ध्यान बराबर रखना पड़ता था । इस परिस्थिति के कारण मांगन अपने आप को सदैव बंधनयुक्त अनुभव करते थे ।

स्थानीय व्यक्ति के अनुराग एवं शिष्य का स्नेह देखकर राजा से नजर बचाकर मांगन यदा-कदा नगर के कार्यक्रमों में शरीक हो जाया करते थे ।

इन्द्रपूजा के अवसर पर दरभंगा राजमध्य भारत के ख्याति प्राप्त शहनाई वादक बिसमिल्ला खां आमंत्रित थे। दरभंगा के दिवानीतकिया में उन दिनों राज दरभंगा के मकान थे (सम्प्रति में सरकारी अन्न गोदाम है)। सरकारी गोदाम के दक्षिण गुणी कलाकारों को ठहराया जाता था। बिसमिल्ला खां प्रात: विश्राम स्थान में शहनाई पर स्वर प्रस्तार में लगे थे। मांगन गुदरी बाबू के संग वहां पहुंचे एवं शहनाई की तरंग में खो गये। शहनाई वादन के अंत में माँगन ने गुदरी बाबू से कहा, 'सुन लिया ?" तुरंत गुदरी बाबू ने जबाब दिया- हां, खां साहेब राग तोरी बजा रहे थे। मांगन ने कहा मैं राग के बारे में नहीं बल्कि शहनाई पर की गई कठिन तान के बारे में पूछ रहा हूं। स्वय मांगन ने स्वीकार किया कि मैं ऐसी तान नहीं कर सकता।

प्राय: १९३७ ई० जून जुलाई में रोसरा में एक संगीत कानफ्रेंस आयोजित किया गया। श्री दिलीप चंद्र वेदी गायक (अविभाजित पंजाब) भी कानफ्रेंस में आये थे। दिलीप चंद सर्वप्रथम भाष्कर राव के शिष्य बाद में उस्ताद फैयाज खां के शिष्य हुए ओंकारनाथ ठाकुर के कनिष्ठ भ्राता रमेश चन्द्र ठाकुर ने भी आयोजन में तबला तरंग प्रस्तुत किया था। कलकत्ता के अनाथ नाथ बोस भी उस आयोजन में आये थे जिन्होंने स्त्री एवं पुरुष दोनों की आवाज में गायन प्रस्तुत किया था। पंचगछिया घराने से संबद्ध वासुदेव उपाध्याय (पखावजिया) अवध पाठक सितारिया आयोजन में सरीक हुए थे। मधुबनी घराने से अमृतीलाल एवं बालगोविन्द झा के चाचा बौआ झा (तबला वादक) भी आमंत्रित थे। मुजफ्फरपुर के जाने-माने संगीत विद् उमाशंकर बाबू के दरबार से उस्ताद कारने खाँ (ध्रुपदिया) एवं उस्ताद नज्जू खाँ (खयालिया) भी उक्त कानफ्रेंस में बुलाये गये थे। सभी कलाकारों को बारी-बारी से कार्यक्रम प्रस्तुत करना था। इसी आयोजन में माँगन जी आमंत्रित किये गये थे। माँगन द्वारा खयाल एवं ठुमरी प्रस्तुत किया गया। माँगन का प्रस्तुतीकरण वेमिसाल था। सुरमल्हार राग में खयाल का उपस्थापन मांगन ने किया जिसके बोल थे :—

"घेरि - घेरि - घेरि,
उमड़-घुमड़ बादरवा साजि"

सुर मल्हार का उपस्थापन कोमल गान्धार के संग मांगन कर रहे थे। जिसमें

ग म रे सा अथवा रे ग रे सा स्वरों को लेकर राग का प्रस्तुतिकरण करने पर राग अतिप्रिय लग रहा था। देश राग की ठुमरी एवं सूरदास का प्रसिद्ध पद "निशदिन बरसत नैन हमारे" का गायन कर माँगन ने श्रोता एवं कलाकार सभी के मन को मोह लिया।

दिलीप चंद्र वेदी मांगन का गायन सुनकर चंचल हो उठे, उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि कहीं कानफ्रेंस में मांगन बाजी न मारले। उन्होंने मांगन की गायन समाप्ति के तुरंत बाद प्रबंधक से आग्रह कर अपना कार्यक्रम रखवाने का आग्रह किया। प्रबंधक ने वेदी की बात मानकर उन्हें अपना कार्यक्रम प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया। गायन में कलाकार ने चार चीजें क्रमशः प्रस्तुत की फिर भी माँगन के जमे रंग को फीका नहीं कर सके।

रोसरा उच्च विद्यालय के प्रांगण में उक्त आयोजन आयोजित किया गया था। आयोजन - समाप्ति पर कलाकारों को सम्मानपूर्वक विदा किया गया। ट्रेन पकड़ने के ख्याल से कलाकार रोसरा स्टेशन पर एकत्रित थे। विश्रामालय में भी कलाकार भरे थे। गाड़ी की प्रतीक्षा सब को थी। सभी गुणी कलाकार कानफ्रेंस में हुए कार्यक्रम की चर्चा कर रहे थे। मूल रूप से चर्चा माँगन की ही हो रही थी। उनके गले की मधुरता को विशेष आकर्षण का कारण माना जा रहा था। दिलीप चंद्र वेदी ने मांगन को रायगढ़ आने का आमन्त्रण दिया। दशहरा के अवसर पर उन दिनों रायगढ़ स्टेट में संगीत का विशेष कार्यक्रम हुआ करता था। देश के चोटी के कलाकार आमंत्रित हुआ करते थे। गायक, वादक एवं नर्तक सभी अपने कला का प्रदर्शन करने के लिए जुटते थे। लखनऊ घराना के प्रसिद्ध नर्तक अच्छन महाराज उसी स्टेट में कार्यरत थे। बिहार के बासुदेव उपाध्याय (पखावज वादक) की धाक भी उन दिनों पूर्ण रूप से थी। महाराज (रायगढ़) कार्तिक नाम के धोबी को अच्छन महाराज से शिक्षा प्रदान करवा रहे थे। मृदंग, तबला आदि के बिकट ताल में नृत्य उपस्थित करने का अभ्यास था उसमें। यहां भी मांगन का कार्यक्रम बड़ा ही आकर्षक एवं प्रशंसनीय रहा।

नेपाल के युद्ध शमशेर राणा (तीन सरकार) के यहाँ किसी बिशेष अवसर पर भारत के विशिष्ट कलाकार आमंत्रित किए गए थे। पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर एवं ओंकारनाथ ठाकुर भी उस आयोजन में काठमाण्डू पधारे थे। मांगन काठमाण्डू के त्रिपुरेश्वर धर्मशाला में ठहराये गये थे।

पं० विष्णु दिगम्बर पलुस्कर एवं ओंकारनाथ ठाकुर का विश्राम स्थल युद्ध शमशेर के निवास स्थान के करीब था। मांगन के साथ तबलावदक युगेश्वर झा थे। ब्रह्मनारायण सिंह ठाकुर जी से बातकर फिर मांगन को ठाकुर जी से मिलाया। एक दूसरे को भली-भाँति जान सके। ओंकर नाथ ठाकुर ने ब्रह्मनारायण सिंह से कि मेरे साथ संगत के लिये कोई नहीं है उन्होंने भी कहा मेरे साथ गाने वाला नहीं है। अन्त में ठाकुर जी के साथ युगेश्वर झा ने तबले पर संगत किया। माँगन का कार्यक्रम हुआ। इनके गायन ने राजसभासद एवं गायन मंडली सभी को ओतप्रोत कर दिया। उनका गायन सुनकर राष्ट्रगायक ओंकारनाथ ठाकुर ने मांगन से कहा "तुम्हारे गाने में आह निकलता है और मेरे गाने में वाह"।

दरभंगा राज में माँगन के रहने के कारण यहां के संगीत क्षेत्र में एक नयी लहर चल पड़ी। कला के पुजारी कलाकार मांगन के शिष्य बनने हेतु लालायित होने लगे। जहां मुसलमान संगीत उस्ताद साधारण संगीत प्रेमी से भरमुँह बात नही करते वहां माँगन के मधुर व्यवहार के कारण कम समय में ही अनेकानेक उनके शिष्य हो गये। सतलखा मधुबनी के गणेशकान्त ठाकुर मधेपुर निवासी राघव झा एव शुभंकरपुर दरभंगा के कामेश्वर झा शिष्य होकर माँगन से शिक्षा ग्रहण करने लगे। कामेश्वर झा कुछ दिनों के बाद गायन छोड़ बालमुकुन्द से तबला का ज्ञान प्राप्त करना प्रारंभ कर दिया। राघव झा एवं गणेश कान्त ठाकुर गायन में ही बने रहे।

गायक, वादक एवं नर्तक तो स्वभाव से ही स्वतंत्र होते हैं एवं स्वतंत्र रूप में जीवन व्यतीत करना चाहते हैं।

माँगन की स्वतंत्रता पर अंकुश लगना प्रारम्भ हो गया। शहर में कहाँ कहाँ संगीत की चर्चा होती है इसकी खबर उन्हें हो गई। उन्होंने भी उन सभी स्थानों पर जाना प्रारम्भ कर दिया। दरभंगा शहर के अनेक बाबू भैया एवं रईअ के यहाँ से मांगन का बुलावा आना शुरु हो गया। किसी के भी निमंत्रण को माँगन टालते नहीं थे।

मांगन के संगीत लोलुप स्नेही मालवीय जी ने, जो इलाहाबाद के रहने वाले थे, दरभंगा वागमती नदी के किनारे रानी सती मंदिर के पास अपना निवास स्थान बना रखा था। प्रतिदिन उनके यहाँ संध्या को बैठक होती थी। दो-चार घंटे संगीत का कार्यक्रम हुआ करता था। मालवीय जी संगीत के

अच्छे जानकार एवं पटु श्रोता थे। पेशा से वे उच्च कोटि के वैद्य थे। गायन, वादन एवं नर्तन तीनों विधाओं के मालवीय जी एक अच्छे पारखी थे। मालवीयजी को संगीत से कैसा सबंध था उसका एक संक्षिप्त वर्णन नीचे प्रस्तुत है।

मालवीय जी के ज्येष्ठ पुत्र का नाम था धन्वन्तरि मालवीय। काल के समक्ष किसी की ताकत का कोई महत्व नहीं होता। वैद्य जी के पुत्र का आकस्मिक निधन हो गया। दाह संस्कार से लौटने के बाद वैद्यजी घर में बैठ कर सितार बजाने में तल्लीन हो गये। सोचने की बात है कि पिता के सामने पुत्र की मृत्यु कितनी भयावह एवं असह्य है। पिता के हृदय पर क्या गुजरता है? ऐसी हृदय द्रावक घड़ी में मालवीयजी अधीर नहीं हुए धैर्य धारण कर संगीत की स्वरलहरी में डूब गये। मालवीयजी ही सर्वप्रथम कामेश्वर झा को माँगन से मिलाकर उन्हें शिष्य के रूप में स्वीकार करने के लिए निवेदन किया था।

आरम्भ से दो तीन वर्षों तक तो मांगन दरबारी गायक अवश्य रहे किन्तु उसके बाद वे जन मानस के कलाकार माने जाने लगे। राजा विशेश्वर सिंह को भी इन बातों की जानकारी होती रही। वे नहीं चाहते थे कि उनके दरबार में रहने वाला कलाकार जन साधारण का कलाकार हो जाय। समय बीतता जा रहा था आश्रय दाता एवं आश्रित में संबंध कटु बनता जा रहा था। माँगन की लोकप्रियता इतनी अधिक हो गई कि वे अपने प्रिय मित्र के बेटे-बेटी की शादी में भी कार्यक्रम प्रस्तुत करने लगे।

शुभकरपुर (दरभंगा) निवासी शम्भू प्रसाद का विवाह दरभंगा स्थित गंगासागर पोखरे पर होना निश्चित हुआ। बारात में मागन कामता प्रसाद के संग गायन हेतु गये थे। दरवाजा लगने के बाद ६ बजे रात्रि में कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ जो प्रातः तक चलता रहा। उन दिनों कायस्थ परिवार में बाराती को भोजन नहीं दिया जाता था। मागन भूखे रहकर चार-पाँच घंटों तक गायन करते रहे। उधर विवाह का कार्य भी सम्पन्न हो गया। चार बजे प्रातः लड़की के पिता के घर से जनवासा पर चंगेरा में भरकर लड्डू खाजा एवं अन्य मिठाइयां भेजी गई। माँगन ने एक दो मिठाई लेकर पानी पी लिया फिर निवास स्थान बेला पैलेस के लिए प्रस्थान किया। रास्ते में "चित्रगुप्त-

भवन", जो क्रमश: प्रकाश टाकीज एवं सोसायटी जैसे विभिन्न नामों से चर्चित रहा है, पैदल ही पधारे। इतने में ही बादल का बरसना प्रारम्भ हो गया। 'चित्रगुप्त-भवन" के बरांडा पर गायक हाथ में तानपुरा लेकर खड़े रहे। उन दिनों एक्का था रिक्सा नहीं। सारी रात थके रहने के बावजूद गायक बरसात की बूंद देखकर अपनी कोमल भावना पर नियंत्रण नहीं रख सके। मेघ मल्हार राग का आलाप आरम्भ कर दिया। बारात की थकान तो उनपर थी ही नहीं जी भर आलाप करते गये। साथ के सभी लोग उस मेघ मल्हार की आलाप में डूब गये। बूंद रुकने पर गायक को एक्का मिला और वे निवास स्थान की ओर चल पड़े। मांगन के साथ बालमुकुन्द झा (तबला वादक) कामेश्वर झा एवं बटुक जी झा (हारमोनियम पर संगत करने वाले) थे।

दरभंगा राजदरबार में प्रत्येक दिन महफिल लगती थी। महाराजा कामेश्वर सिंह एवं उनके अनुज विश्वेश्वर सिंह के साथ सभासद मोसाहेब, गायक, वादक, नर्तक, कवि, पंडित एवं भाट आदि सभी बैठते थे। जिन गायकों के गायन वादन एवं नर्तन उन्हें उस दिन सुनना एवं देखना अभिप्रेत होता था उन्हें कार्यक्रम प्रस्तुत करने का आदेश मिलता था। कलाकार महफिल में अपना कार्यक्रम प्रस्तुत करना आरम्भ कर देते थे। इन्द्र पूजा के अवसर पर इन्द्रभवन में कार्यक्रम हुआ करता था। इन्द्रपूजा समाप्ति पर सभी कलाकार राजनगर जाते थे जहां उन्हें दुर्गा पूजा तक रहकर अपना कार्यक्रम प्रस्तुत करना होता था। राजा विश्वेश्वर सिंह राजनगर मे ही विशेष रूप से रहते थे।

प्रत्येक वर्ष झुलन के अवसर पर दरभंगा स्थित अनेक मंदिरों पर भी संगीत का कार्यक्रम हुआ करता था। इसी अवसर पर एक वर्ष प्रधान घाट (वागमती तट) पर पनिचोभ निवासी स्व० रामचन्द्र झा गायक का कार्यक्रम था तथा मधुसूदन प्रसाद अग्रवाल (वेला, दरभंगा) के राम-जानकी मंदिर पर माँगन का कार्यक्रम था। रामचन्द्र झा अपना गायन समाप्त कर माँगन का कार्यक्रम सुनने की अभिलाषा से उपस्थित हुए। माँगन गौड़ मल्हार गा रहे थे जिसके बोल थे "गरजत वरसत भीजते आयल"। रामचन्द्र झा गायक को देख मांगन की प्रतिभा जैसे और भी निखर गई हो। वास्तव मे सफल कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन अच्छे ढग से वहीं कर पाते हैं जहाँ उनके श्रोता संगीत

के मर्मज्ञ एवं परिपक्व होते हैं। दरबार में एक समय राम चन्द्र झा गायक ने कंठे महाराज सुप्रसिद्ध तबला वादक से कहा था "इतने बड़े वादक होने के बावजूद वेश्या (शैल कुमारी, वाराणसी) के साथ आप कमर में तबला बांध खड़े होकर बजाते हैं। कंठे महाराज ने कहा था 'उनको भोजन मिलता है, इन्ही के साथ रहकर इज्जत मिलती है तो फिर वे राजे महाराजे के पास क्यों कर जाएँ ? कंठे महाराज के इस उत्तर से श्री झा बहुत ही प्रभावित हुए। श्री झा ने भी जीवन पर्यन्त इस बात को याद रखा एवं किसी दरबार की चहार दिवारी के अंतर्गत अपनी कला को कैद नहीं रख उसे स्वच्छन्द एव उन्मुक्त वातावरण में रखा।

पँचगछिया दरबार छोड़ मांगन जब दरभंगा आये तो बाबू लक्ष्मी नारायण सिंह मर्माहित हो गये। ऐसा लगा कि उनकी सारी चीजें लुट गई। लगाये फलवृक्ष पर जैसे वज्रपात हो गया हो। वे फन थकुचे साँप की तरह छपपटा रहे थे। उनका जीना जैसे दुसवार हो रहा था। अन्त में उन्होंने अपने दरबार के अन्य कवि, कलाकार एव राज्याश्रित को बुलाकर कह दिया कि मांगन के चले जाने पर जो अतिशय पीड़ा हो रही है वह कहने योग्य नहीं है। मांगन स्वयं जीवन में कभी प्रसन्न नहीं रहेगा उसे भी ऐसी वेदना सहन करनी होगी। उन्होने उसी असह्य वेदना में कहा कि जीते जी वह छोड़ चला गया इस कारण वह कभी भी मेरे सामने दूसरी बार न आये। मरने के बाद जबतक मेरी लाश खाक-छाड़ न हो जाए वह सामने नहीं आने पाये। आगे इसी वचन का पालन भी किया गया।

मांगन के दरभंगा आ जाने पर कई वर्षों बाद लक्ष्मी बाबू ने पुनः एक शिष्य को संगीत का ज्ञान देना आरम्भ किया जिसका नाम था रघु झा। रघु झा सर्वप्रथम रामलीला में कार्य कर रहे थे। रामलीला में गाये गीत से प्रभावित होकर एवं मांगन के विरोध में उत्तर देने हेतु लक्ष्मी बाबू ने उन्हें शिष्य बनाकर संगीत दान देना शुरू किया। रघु झा को भी प्राकृतिक देन थी। आवाज वजनदार एवं मिठास लिए थी। पचगछिया घराने की गायकी की पूर्ण झलक रघु के गले में उतर चुकी थी। पांच वर्ष ज्ञान देने के बाद बाबू लक्ष्मीनारायण सिंह इस धरा-धाम को छोड़ स्वर ईश्वर मे विलीन हो गये। कहा जाता है कि मृत्यु से पूर्व बाबू लक्ष्मीनारायण सिंह ने देशी राग का

गायन किया था। सर्वप्रथम उन्हें जौन्डिस की बीमारी हुई बाद में लीभर सिरोसिस। उन्हें बनारस ले जाया गया जहाँ वैद्य से उपचार कराया गया किन्तु काल से वे भी बच न पाये। पचगछिया संगीत इतिहास पर पटाक्षेप हो गया।

रायबहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह के गुरू का नाम विश्वनाथ पाठक था। विश्वनाथ पाठक देश के चोटी के कलाकारों में से एक थे। राय बहादुर के अनेक शिष्य हुए जिनमें सबसे प्रधान मांगन हुए। मांगन के बाद रघु झा एवं अनमोला गायक के नाम आते हैं। तबला वादक के रूप में भी अनेक शिष्य थे राय बहादुर के। बुआ झा, हरिनन्दन सिंह एवं बाल मुकुन्द झा का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। राय साहेब अपने तो स्वयं शिक्षा देते ही थे बाहर से आये कलाकारों से भी अपने शिष्यों को ज्ञान प्राप्त करवाते थे। बनारस के मौलवी राम से तबला का ज्ञान बुआ झा को तथा बनारस के ही विरू उस्ताद से बाल मुकुन्द झा को तबला की शिक्षा दिलवाते थे।

एक समय किसी राग के प्रसार में रघू झा ने भूल की थी। उनसे उचित स्वर नहीं लग रहा था। वर्जित स्वर ही श्री झा से बार-बार लग रहा था जिस कारण बाबू लक्ष्मी नारायण सिंह ने अपनी खराम से रघु झा की पिटाई की थी। पिटाई के क्रम में खराम से ललाट पर चोट लगी, रक्तपात होने लगा। घाव तो मरहम पट्टी से भर गया किन्तु निशान बनी रही। कहा जाता है कि रघू झा मृत्यु के समय तक पूजा करते समय उस निशान पर चानन-फूल लगाते रहे, कारण उस निशान को घाव नहीं वल्कि गुरू प्रसाद समझते थे। रघू झा एक उच्च कोटि के गायक सिद्ध हुए। पँचगछिया घराने की प्रतिष्ठा को उन्होंने बनाकर रखा। झाजी पटना आकाशवाणी के कलाकार हुए। भारत के अनेक स्थानों पर जाकर उन्होंने अपना गायन प्रस्तुत किया। पटना एवं दरभंगा के आकाशवाणी से यदा-कदा उनका टेप अभी भी बजाया जाता है।

दरभंगा दरबार में मांगन उदास दिख पड़ने लगे। दरबार से आय सीमित थी। प्रायः ५० रुपये मासिक पर ही वे कार्यरत थे। उनके साथ मिला-जुला कर आठ-दस व्यक्ति थे जो सभी मांगन की आय पर ही निर्भर करते थे। मांगन को बाहर कार्यक्रम उपस्थित करने का आदेश भी नहीं था। राजा साहेब से नजर बचाकर ही कार्यक्रम करते थे। कार्यक्रम से थोड़ी आय भी उनको

हो ही जाती थी किन्तु इसकी भी सूचना दरबार को मिल जाती थी। दरबार का रुख भी बदल रहा था। मांगन ने अन्ततः दरबार छोड़ सहरसा वापस जाने का निर्णय ले लिया था। अर्थाभाव से परेशान होकर मांगन ने राजा विश्वेश्वर सिंह के आदेश से अठारह सौ रुपये अग्रिम वेतन के रूप में कर्ज ले लिया। दरबार में रहकर इस राशि का सामंजस्य अपने वेतन से कर देने संबंधी आवेदन भी उन्होंने की थी। ब्रह्म नारायण सिंह जो मांगन के अभिभावक थे पुनः दूसरी बार उनका कान भर दरबार छोड़ देने के लिये उनको ठीक कर लिया। राजा साहेब एवं मांगन के बीच ब्रह्म नारायण सिंह ने एक खाई खोद दी। प्रेम और स्नेह के स्थान में द्वेश और घृणा का वातावरण बनता गया राजा साहेब और मांगन के बीच।

बाबू योगेन्द्र नारायण सिंह के पौत्र पन्नाजी का विवाह निश्चित हुआ पँचगछिया में। इस विवाह का निमंत्रण पत्र मांगन को उनके दरभंगा स्थित निवास स्थान पर प्राप्त हुआ। मांगन को पँचगछिया जाने की प्रबल इच्छा तो पहले ही से हो चुकी थी मात्र युक्ति नहीं बैठ रही थी। मांगन ने छुट्टी संबंधी उल्लेख कर राज सचिवालय में याचना की। उनकी याचना नामंजूर कर दी गई। सारी बातों की जानकारी मांगन ने ब्रह्म नारायण सिंह को दी। कलाकार किसी भी युग में बन्धा नहीं रहा है। मांगन भी बिना किसी की परवाह किए चल दिये तथा विवाह में सरीक हो गये।

राजा विश्वेश्वर सिंह को मांगन के चले जाने की सूचना मिली। मांगन के निवेदन पर दिये गये आदेश की तामिल न होने पर काफी रोष हुआ। राजा साहेब बिना कोई कानूनी कार्यवाही किये शान्त हो गये। उन्हें ऐसा लगा कि मांगन पुनः दरबार लौट आयेगा। कलाकार के कोमल हृदय पर आघात नहीं करना चाहते थे।

पँचगछिया आकर माँगन ने दरबार के सारे वसूलों को भुला दिया। उन्हें ऐसा लगा कि वे अब दरबार को छोड़ नयी जिन्दगी आरम्भ कर रहे हैं। स्वच्छन्द होकर कार्यक्रम में भाग लेना शुरू किया। सारे बिहार में उनकी चर्चा होने लगी। गांव से लेकर शहर, विद्यालय, विश्वविद्यालय सभी जगहों से उन्हें निमंत्रण जाने लगे और वे निःसंकोच प्रतिबंध रहित

होकर उसमें भाग लेने लगे। आय बढ़ गई एवं प्रसिद्धि भी पहले से अधिक हो गई।

ब्रह्म नारायण सिंह के निवास स्थान पंचगछिया (सहरसा) में शिष्यों की भीड़ लग गई। मांगन सगीत के आचार्य बन गये एवं शिष्यों को रियाज करवाने लगे। ब्रह्म नारायण सिंह की अच्छी खासी जमींदारी थी। पाँच सौ बीघा खेती थी, कलम बाग थे, गाय - भैंस दूध के लिये रखी गयी थी।

अब मांगन के साथ उनके सारे शिष्यों का भोजन एवं आवास का प्रबन्ध ब्रह्म नारायण सिंह का था। दिन रात निवास स्थान पर रियाज चल रहा था। जिसे जो खाने की इच्छा होती वह फरमाइश करता सारा प्रबन्ध ब्रह्म नारायण सिंह द्वारा कर दिया जाता था।

दरभंगा स्टेट छोड़ने के बाद जब माँगन चारों तरफ अपना कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे थे तो सतलखा के गणेश कान्त ठाकुर भी उनके साथ थे। चम्पानगर में कुमार श्यामानन्द सिंह के यहाँ दस दिनों तक रह कर कार्यक्रम देते रहे। कुमार साहेब के यहाँ प्रातः एव सन्ध्या दोनों समय महफिल लगती थी और माँगन का गायन हुआ करता था। पूर्णियाँ के राजा बहादुर कृत्यानन्द सिंह एवं राजा पी० सी० लाल के यहाँ भी उनका गायन हुआ। उन दिनों रघु झा पी० सी० लाल के यहाँ दरबारी गवैये के रूप में कार्यरत थे। पूर्णियाँ स्टेट के आलम नगर में एक संगीत कानफ्रेंस किया गया था। देश के विभिन्न भागों से कलाकार आमंत्रित किये गये थे। बनारस की अनेक वाई भी आयी थी। मांगन शास्त्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत करने के बाद लोक गीत प्रस्तुत करने लगे। गीत के बोल थे "बाबू दरोगाजी कओने कसूर से धयले पियवा मोर।" इस गीत के सुनने के बाद अख्तरी बाई ने कहा था 'जिन्दा रहने दोगे या नहीं"? पूर्णियाँ के बाद भागलपुर में अनेक स्थानों पर माँगन का कार्यक्रम हुआ। मुँगेर के खड़गपुर थाना पर उनका कार्यक्रम हुआ। पुनः खड़गपुर से मुँगेर जाकर फिर मुजफ्फरपुर में धर्मशाला में ठहर कर उमा शंकर बाबू के यहां कार्यक्रम देते रहे। कार्यक्रम झुलन से आरम्भ होकर देवी पूजा की दशमी तक चलता था। मांगन ने यहीं गणेश कान्त ठाकुर को गंडा बान्धा था। मुजफ्फर-पुर के बाद बेगुसराय के मेदिनी बाबू वकील के यहाँ मांगन का कार्यक्रम हुआ। आजादी से पूर्व सम्पूर्ण भारत में छोटे-बड़े राजे - महाराजे थे। सामन्ती भाव

पूर्ण रूप से व्याप्त था। हर रियासत में एक राजा अवश्य था एवं उसकी जमीन्दारी थी। स्टेट का मालिक राजा होता था एवं उसकी प्रजा राजा को लगान एवं तोहफा पहुंचाया करती थी।

सीतामढ़ी जिला के अन्तर्गत सुरसण्ड कभी स्टेट था जिसके उत्तराधिकारी सर चन्द्रशेखर प्रसाद नारायण सिंह थे। सर चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह स्व० जवाहरलाल नेहरू के प्रधान मंत्रीत्वकाल में नेपाल एवं जापान के राजदूत बनाये गये। उससे पूर्व वे पटना विश्वविद्यालय एवं कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के कुलपति एवं कुलाधिपति बनाये गये। स्व० श्रीमती इन्दिरा गांधी एवं श्री राजीव गांधी के प्रधान मंत्रीत्वकाल में श्री चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह उत्तर प्रदेश के राज्यपाल बनाये गये।

सर चन्द्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह के राजगद्दी महोत्सव में मांगन गायन हेतु आमंत्रित किये गये थे। शास्त्रीय संगीत के साथ उन्होंने लोक संगीत का गायन प्रस्तुत किया था। दरबार के उपस्थित राजे महाराजे, कलाकार आमंत्रित हित-अपेक्षित सबों ने गायन की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी।

1941-42 ई० में मांगन दूसरी बार रायगढ़ बुलाये गये। दिलीप चन्द्र बेदी एवं वासुदेव उपाध्याय ने विशेष रूप से राजा से सिफारिश कर मांगन का गायन सुनने का निवेदन किया। निवेदन सुनकर राजा ने मांगन को गायन सुनाने का आदेश दिया। ब्रह्म नारायण सिंह ने मांगन से रागगाड़ा की ठुमरी प्रस्तुत करने के लिये कहा। गीत के बोल थे—"विकल सैंया करि गयो रे मोरा जियरा"। चालिस मिनटों तक गायन चलता रहा। दरबार में बैठे सभी मंत्रमुग्ध हो गये। दरबार से लौट कर मांगन डेरा पर आये ही थे कि महाराजा के एक व्यक्ति ने आकर कहा कि वे तुरन्त याद फरमाये हैं। मांगन तैयार तो थे ही तुरन्त चल पड़े। महाराजा ने बड़ी तारीफ की और उन्हें उसी राज में रह जाने का आग्रह भी किया। आग्रह मानकर माँगन करीब छः माहों तक वहाँ रहे। महाराजा ने मांगन को एक मकान, एक कार एवं 500 रुपये मासिक वेतन देना स्वीकार कर लिया। कार तो उनको आने जाने के लिए ही दिया था। कुछ

दिनों के बाद मांगन का स्वास्थ्य बिगड़ना शुरू हो गया और अन्त में माँगन ने उस नौकरी को भी छोड़ दिया।

चम्पानगर की एक घटना बहुत ही महत्वपूर्ण है। मांगन प्रतिवर्ष चम्पानगर दशहरा में जाया करते थे। दरभंगा दरबार छोड़ने के बाद यह क्रम बना रहा। भारत के मशहूर कलाकार वहाँ आमंत्रित किये जाते थे। उस महफिल में मांगन को ठुमरी गायन के लिए कहा गया। यह बात मांगन के शिष्य बाल गोबिन्द झा को नहीं जँची। उन्होंने कहा मात्र ठुमरी गायन हेतु ही क्यों कहा जा रहा है? मांगन ने कहा श्रोता की जैसी इच्छा। बाल गोविन्द झा ने कहा खूब कठिन ठुमरी आप प्रस्तुत करें। मांगन ने रामकली राग के तीन ताल में ठुमरी प्रस्तुत किया। ठुमरी के बोल थे- "सजनी री पिया बिन निन्द न आवे"। कुमार श्यामानन्द सिंह के गुरु भीष्मदेव चटर्जी जो उस्ताद बादल खां के शिष्य थे वहां उपस्थित थे। भीष्म देव चटर्जी एवं अलताप हुसैन ने कहा आज अन्य कलाकारों का कार्यक्रम नहीं होगा। अन्य कलाकारों का कार्यक्रम नहीं रखने में अवश्य ही कुछ उद्देश्य रहा होगा। उद्देश्य यही था कि जो रंग माँगन जमा चुका है उसपर किसी दूसरे का रंग नहीं चढ़ पायेगा।

संगीत के मर्मज्ञ विद्वान सुप्रसिद्ध रईश उमाशंकर प्रसाद जो मुजफ्फरपुर के निवासी थे उनके यहां भारत के चुनिन्दे कलाकार आमंत्रित किये जाते थे। एक समय की बात है राष्ट्रगायक ओंकार नाथ ठाकुर वहाँ बुलाये गये थे इधर पचगछिया से माँगन भी आमंत्रित थे। दरबार में महफिल सजी। गुणी कलाकार एवं सुविज्ञ श्रोता सभी यथास्थान बैठ चुके थे। उमाशंकर बाबू ने ठाकुर जी से सुगम संगीत गायन के लिये निवेदन किया। निवेदन के बाद ठाकुर जी ने भैरवी राग में ठुमरी गायन प्रारम्भ किया। सूरदास के रचित पद जिसके बोल थे "अबकी टेक हमारी लाज राखो गिरधारी"। यह गायन विशेष प्रभाव नहीं जमा सका। सर्वांग स्वरूप उपस्थान के बाद गायन का समापन होना चाहिए था कि ठाकुर जी ने पहले ही समाप्त कर दिया। अब माँगन की बारी थी। गाने से पहले ही ठाकुर जी ने मांगन से प्रश्न किया क्या तुम उक्त गीत का गायन कर सकते हो? हाँ कह दिया मांगन ने। गायन प्रारम्भ हुआ दरबार के उपस्थित सभी व्यक्ति झूम उठे माँगन के गायन पर। ठाकुर जी स्वयं विभोर हो गये। गीत समाप्ति पर ठाकुर जी ने हाथ फैलाकर आलिंगन करते हुए कहा कि तुम्हारे गले में वो जादू है जिससे किसी को भी तुम कुछ क्षणों के

लिए वशीभूत कर सकते हो। ठाकुर जी की दृष्टि में माँगन उन दिनों बिहार का सर्वश्रेष्ठ गायक था। छोटी सी एक घटना से यह तथ्य स्पष्ट हो सकता है।

दरभंगा स्थित मनीगाछी के अन्तर्गत वघात ग्राम निवासी राम झा के कनिष्ठ अनुज एक समय ओंकार नाथ ठाकुर से संगीत शिक्षा ग्रहण हेतु उनके समक्ष उपस्थित हुए। ठाकुर जी आगन्तुक की सारी बातें सुनने के पश्चात उन्हें फटकारते हुए कहा संगीत की शिक्षा प्राप्त हेतु तुम माँगन के पास क्यों नहीं गये ? बिहार में अभी उससे बढ़कर दूसरा कौन है ? जाओ उन्हीं से शिक्षा ग्रहण करो। झा जी मुँह बनाकर वघात लौट आये।

मांगन के गायन में एक विलक्षणता यह थी कि वे ठुमरी गायन के साथ साथ कवित्त भी गाते थे। सर्व प्रथम तो वे विलम्बित प्रस्तुत करते फिर मध्य-लय, ठुमरी एवं विद्यापति के पद गाकर गायन समाप्त करते थे। संगीत में ठुमरी एक क्षुद्र गायन है जिस गायन की मधुरता हेतु गायक किसी दूसरे राग की भी छाया दिखाकर मूल राग पर चले आते हैं। गायन में मधुरता उसका मूल तत्व माना जाता है। ठुमरी गायन की मधुरता बढ़ाने के लिये मांगन इस गायन में अविर्भाव एवं तिरोभाव खूब दिखाते थे। मन रंजन हेतु स्वर के शुद्ध, विकृत जो कोई रूप गायक उचित समझते थे पूर्ण स्वतन्त्रता पूर्वक प्रयुक्त कर लिया करते थे। श्रृंगार रस का यह गायन बड़ा ही मनोरम होता है। इस गायन में माँगन महा पंडित माने गये हैं। ठुमरी के साथ श्रृंगारिक कवित्त को उपस्थित कर गायन में चार चांद लगा देते थे।

मांगन द्वारा गाये जाने वाले कुछ मुख्य कवित्त जिसे वे हमेशा गायन मध्य प्रस्तुत किया करते थे। होली से सम्बन्धित ठुमरी "केशरिया अंगिया रंग डाला रंग डाला नन्द के लाला।"

के साथ जो कवित्त प्रस्तुत करते थे वह निम्नलिखित हैं :—

"सिगरे बृजमंडल की वारी सी नारियों की मंडली,
लाला को धरि राधे ढिग लावेगी।
साजि के नुकिले नयनन के शैनन से,
श्याम के हृदय बीच उधम मचावेगी।
झोंकि-झोंकि झोरि भरि मूठन अबीरन की,

रंगहुँ की धार से अनंग को जगावेगी ।
यमुना के कुलीन शकल ग्वाल-बाल को,
कामरी उतार चिन्हा घाघरी नचावेगी ॥"

दूसरी ठुमरी ',ठाड़े रहियो घनश्याम, गगरिया में धरि आऊँ ।" इसके साथ भी कवित्त प्रस्तुत किया करते थे :—

"मेरो तन-मन श्याम ही सों रंग रहो,
ओरे रंग देख होत नयन मन शाल है ।
नीले पट नीलमणि भूषण सुखद लागे,
नील जल यमुना के अति सुख पाल है ।
भनय दलसिंह नृप नील बन सहज ही,
तामे सुठिप्रिय लागे विपिन तमाल है ।
नील तरु नील फूल नीलगिरि नीलकंठ,
नील घन देखे दृगमानत निहाल है ।"

उपर्युक्त ठुमरी के साथ और भी दूसरी कवित्त कहते थे :—

"चुमो करकंज मंजु अमल अनूप तेरो,
रूप के निधान कान्ह मोहन निहारिदय ।
कालिदास कहे मेरे पास हँसि हेरि-हेरि,
माथे धरि मुकुट - लकुट कर डारिदय ।
कुंबर कन्हैया मुखचन्द की जुन्हैया चारु,
लोचन चकोरन की प्यास न निवारिदय ।
मेरे कर मेंहदी लगी है नन्दलाल प्यारे,
लट उरझी है नकबेसरि सम्हारिदय ।

राधिका के चरण विराजय चारु माणिक से,
मुँगा की फली सी भली अंगुरी सुभावे हैं ।
गजाधर कहे करी कर से युगल जानु,
छीन कटि केसरी सों वेश अविलासे हैं ।
पान सों उदर हुमे कुम्भ सों उरोज बर,
बाँह लतिका सी खाँसी कामतरु साखे हैं ।

इन्दु सों बदन कुसुम बिन्द से अधर लाल,
कन्द से रदन अरबिन्द सी आखें हैं।
कंजन ने बाँसुरी बजाई नन्द-नन्दन जू,
ध्वनि सब के हिय को होश हरि गे।
कहे गिरधारी कुलनारिन की भीड़ भई,
निपट अधीर पैम धीर नेक करि गये।
बिकसी कली सी चलि निकसी निकेतन तें,
नहिं ब्रत नेम को बिचार कछु करि गये।
लाज को रिशाल तजि दौड़ी ब्रजबाला सब,
आज कुलबाला को दिवाला सो निकसे गये।"

ठुमरी के ही साथ मांगन कवित्त कहा करते थे ऐसी बात नहीं निर्गुण गाते समय भी कविता प्रस्तुत करते थे। निर्गुण के बोल थे :—

"नहिरा से नतवा छोड़ौने जाइछै पियवा।"

उपर्युक्त निर्गुण के साथ जो कविता प्रस्तुत किया करते थे उनके अंश प्रस्तुत किये जाते हैं :—

"केते भये यादव सगर सुत केते भये,
जात हू न जाने ज्यों तरैया प्रभात की।
वेणु, अम्बरीश, मान्धाता, प्रहलाद कहिये,
कौरव कथा रावण जवात की।
एहू न बचन पाय कालकौत की के हाथ,
भाँति - भांति सेना रथी घने दुःख थातकी।
चार-चार दिन को बचाव सबको करौ,
अन्त लुटि जइहें जैसे पुतरी बारात की।
हेरति ही हाथिन के हलके हेराई जइहें,
रो - रो सब छोड़े रथ बहल विलावयगी।
मुहरे रुपैया पर मोहरे रहेगी करी,
परी सी नितम्बनी ते पड़ी रहि जायेगी।
पालकी में हालकी की खबरि ना रहेगी जब,

काल की कलेबर की फौजे उठि धावेगी।
गुम्भजू सिपाही माहि बढ़त मरातिबतें,
नौबति बजाइबे की नौबत न आवयगी।"

मांगन पीलू, देश, भैरवी, खमाज, सारंग एवं राग गारा में विशेषतः ठुमरी गाया करते थे। गारा में जो ठुमरी गाते थे उसके बोल निम्नलिखित थे:-

"विकल सैंया करि गयो रे मोरा जियरा"

ठुमरी गायन में उन दिनों जमरुद्दीन खां का नाम प्रथमतः लिया जाता था किन्तु बिहार के मांगन भी कम न थे। गारा की दूसरी ठुमरी भी मांगन गाते थे जिसके बोल थे :—

'पीड़ाए मोरी अंखिया मोरा,
राजा हमसे नाहीं बोल।

भैरवी की ठुमरी :—

"बाजू वन्द खुलि - खुलि जाय"

होरी में :— "बावरो भयो हैं नन्द लाल"

कजरी में :— "सोचे - सोचे ब्रजवाम
नहिं आये घनश्याम
घिरि आये बदरा"

सभी ठुमरियों के साथ मांगन कवित्त प्रस्तुत करते थे। जैसे ठुमरी के बोल होते थे कवित्त भी उसी प्रसंग के हुआ करते थे। ठुमरी एवं कबित्त दोनों की प्रस्तुति से श्रोता वाह-वाह कर बैठते थे।

मांगन गीत गोविन्द भी गायन में प्रस्तुत करते थे। इस गायन में मांगन पंडितों के बीच प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके थे। गीत गोविन्द के कुछ अंश प्रस्तुत किये जाते हैं जिसे मांगन गाया करते थे।

गुर्जरी राग एकताल में :—

रति सुखसारे गतमभिसारे मदनमनोहरवेशम्।
न कुरु नितम्बिनि गमन विलम्बनमनुसर तं हृदयेशम्॥ ६

धीरसमीरे यमुना तीरे वसति वने वनमाली ।
गोपी पीनपयोधरमर्दन चंचलकर युगशाली ।। ध्रुवम् ।।

नाम समेतं कृत संसेतं वादयते मृदु वेणुम ।
बहु मनुतेऽतनु ते तनुसंग तपवन चलितमणि रेणुम् । धीर ।

रामकरी राग यतिताल में :--

चन्दन चर्चित नीलकलेवर पीत वसन वनमाली ।
केलि चलन्मणि कुण्डल मण्डित गण्डयुगः सितशाली
हरिरिह मुग्धवधूनिकरे विलासिनि विलसति केलिपरे ।। ध्रुवम् ।।

पीन पयोधर भारभरेण हरि परिरम्य सरागम् ।
गोप वधूरनु गायति काचिदुदञ्चित पंचम रागम् ।। हरि ।।

महाकवि विद्यापति के गीतों को दरबार मध्य उपस्थित करने का श्रेय सर्वप्रथम मांगन को ही हैं । ठुमरी नुमा लय में विद्यापति के गीतों को उपस्थापन करने का एकाधिकार भी उन्हीं को था । गायक मंडली एवं दरबार मध्य रागताल में विद्यापति के गीतों को प्रस्तुत कर संगीत के क्षेत्र में मांगन ने एक नया आयाम दिया ।

मिथिलांचल एवं मैथिली-संस्कृत भाषा के उद्भट् विद्वान एवं भूतपूर्व सांसद प्रो० सुरेन्द्र झा "सुमन" का कहना है कि महाकवि विद्यापति के गीत जिस लय में अभी गाये जाते हैं वे मांगन की ही देन है । विद्यापति गीत के गायन दो रूप में प्रचलित है । एक तो मिथिला की ललनाओं के कंठ में धरोहर के रूप में है जो प्राचीन लय में गाये जाते हैं दूसरे वे जो कलाकारों के द्वारा शास्त्रीय स्वरूप में प्रस्तुत होते हैं ।

उपर्युक्त के संबंध में पद्म श्री सियाराम तिवारी के विचार प्रस्तुत करना चाहूंगा— "मुझे जहाँ तक याद है १९३६-३७ की बात है मेरी आयु १७-१८ साल की रही होगी, उन दिनों पटना सीटी के वेलवरगंज पश्चिम दरवाजा मुहल्ले में एक मशहूर रईश जमीन्दार संगीत के बहुत ही प्रेमी नावालिग बाबू के नाम से मशहूर थे, उस जमाने में उनके यहाँ आषाढ़ महीने में रथयात्रा-उत्सव बड़े धूम-धाम से मनाया जाता था उसमें बड़े मशहूर कलाकार सम्मिलित

होते थे, दो दिनों का कार्यक्रम होता था। उसी उत्सव में माँगनजी आये थे। उनके साथ उनके शिष्य श्री बटुक झा तथा तबले पर श्री युगेश्वर झा साथ थे जहां तक मुझे स्मरण है, मैंने अपने पूज्य पिता स्व० पं० बलदेव तिवारी जी के साथ उत्सव में गया था। मांगन जी से पिताजी की गाढ़ी मित्रता थी जिस कारण मुझको मांगन जी बड़ा प्यार करते थे। उसी उत्सव में मांगन जी का गायन विशेष रूप से सुनने का अवसर मिला। मुझे अच्छी तरह याद है कि पहले उन्होंने एक ख्याल राग सूरदासी मल्हार में लम्बित और द्रुत सुनाया था उसके बाद एक विद्यापति का पद "सुतलि छलौं हम घरवा रे गरबा मोतिहार"। इस पद को तो उन्होंने ऐसा भाव विभोर होकर सुनाया कि सभी श्रोतागण लोट-पोट हो गये कितने लोगों को तो मैंने ऐसे देखा कि आंखों से अश्रु धारा बह रही थी, इतनी सुरीली आवाज, गले में इतना दर्द इतनी कशिश थी कि सभी लोग इनके गायन सुनकर झूम रहे थे। मैं भी स्तब्ध होकर सुन रहा था मैं तो उस समय युवक था थोड़ा बहुत ज्ञान था, मुझे खूब स्मरण है उनका वह गायन, अभी तक मैं भूल नहीं पा रहा हूं। ख्याल के अलावा ठुमरी भी बहुत अच्छा गाते थे। विद्यापति पद का तो कहना ही क्या है, शब्द स्वर के माध्यम से साक्षात राग खड़ा कर देते थे, उनकी आवाज छोटी थी लेकिन बहुत ही सुरीली आवाज थी तथा गले में बहुत ही दर्द था। सर्वप्रथम विद्यापति का पद "सुतलि छलौं हम घरवाँ रे, गरवा मोतिहार" मैंने उन्हीं के मुँह से सुना और जहाँ तक मेरी धारणा है मैं यह कहूंगा कि इस पद का धुन इन्ही का प्रचार किया हुआ है। १९४२ में तीसरी बार उनका गायन सुनने का अवसर मिला पटना के मशहूर रईश जमीन्दार बाबू अलख नारायण प्रसाद के निवास स्थान कदम कुँआ में जहां मांगन जी के गायन का आयोजन किया गया था। इस जलसे में भी इनका कार्यक्रम बहुत बढ़िया रहा। शास्त्रीय गायन के अंत में एक गीत इन्होंने सुनाया था मुझे स्मरण है उसका शब्द "सपने में साजन आये, पलंग पर बहियाँ पकड़ के लिपट गई हो।" क्या बतावें इस पद को उन्होंने ऐसा गाया और दर्शाया कि सबलोग आत्म विभोर हो गये, ये तीनों कार्यक्रम जो मैंने उनके सुने ये जीवन भर भुलाने को नहीं है। मैं इनकी जितनी भी बड़ाई या तारीफ करूँ बहुत कम है।"

महाकवि विद्यापति के दूसरे पदों को भी रागगारा में माँगन गाया करते थे

'चानन भेल विषम सर रे,
भूषन भल भारी।
सपनहुं हरि नहि आयलरे,
गोकुल गिरधारी" ॥

"के पतिया लय जायत रे,
मोरा प्रियतम पास।
हिय नहि सहय असह दुख रे,
भल सावन मास"।

"आकुल चिकुर बेढ़ल मुख सोभ,
राहु कएल ससिमण्डल लोभ।
उभरल चिकुर माल कर रंग,
जनि जमुना जल गंग तरंग ॥

मोरा रे अंगनमा चनन केरि गछिया,
ताहि चढ़ि कूड़ाय काग रे।
सोने चोंच तोहे बान्हि देव बायस,
जँपिया आओत आज रे।"

महेशवाणी :— हम नहि आजु रहब एहि आँगन,
जगो बुढ़ होएत जमाए। गे माई।
एक तँ बइरि भेल विध विधाता,
दोसर धिया केर बाप।
तेसर बइरि भल नारद बाभन,
जे बूढ़ आनल जमाए। गे माई।

नचारी :— "आजु नाथ एक व्रत महासुख लागत हे।
तोहें शिव धरु नट भेष
कि डमरु बजावह हे ॥
तोहें गौरी कहै छह नाचए हम कोना नाचव है।
चारि सोच मोहि होइ कओन विधि बाँचल हे ॥

परशर्मा के महान सन्त लक्ष्मी नाथ गोसाईं रचित पद भी माँगन बराबर गाते थे

यथा :-- "उधो अब ना उचित बिदेश"

पाबस ऋतु मे इस पद के गायन करते माँगन देखे जाते थे :—

"जे नर राम भजन नहिं जाने,
सो जन्मे काहे को रे ।"

निम्नलिखित भजन जिसे माँगन अनेक उत्सवों में गाया करते थे :—

'सुग्रीव सोच मिटाये दया निधि, सुग्रीव सोच मिटाये ।
करि यारी नारी के कारण लीन्हो साथ लगाये ।।
अभय कीन्ह पुर भेजि दियो हैं आपहुं बिटप छपाये ।
जाय पुकार दूरि सों कीन्हों बालि सुनत उठि धाये ।।
गहि मुष्टिका मारो उर उपर, सुधि बुधि सबै भुलाये ।
काँपत रोवत आय राम पहुं, बोले अति बिलखाये।।
निज कर मारि डारू बरु तुमहीं नाहक मोहि पठाये ।
लक्ष्मी पति समुझाय सुग्रीवहिं पुष्प माल विलगाये ।
हतो बालि रघुवीर धीरबर जनहित व्याधि कहाये ।।

भजन — २

सबरी सकल विपिन खोजि आई ।
मिले न राम कमल दल लोचन रोअति मन पछिताई ।।
हा करुणा कर राम दया निधि कहँ अटके रघुराई ।
दशरथ सुत कौशल्या नन्दन सीतापति सुखदाई ।।
कबकी तोड़ी बेर कुरस भयेउ, बहि गयेउ रस मधुराई ।
पान न बीरा मुखेन अब लागे. सुमन माल कुम्भि लाई ।।
कन्द मूल पाके फल सुन्दर हो गउ अब अमताई ।
दोना भरि - भरि माद मंजु रस हो गयेउ सबै तिताई ।
दीना नाथ अबहु नहिं आये अब मरिहों विष खाई,
लक्ष्मी पति सबरी घर आए सिया सहित दोउ भाई ।।

भजन - ३

घटी बात तुम कियो कन्तजी, हरिलायो जानकी वन सें।
राम पिता जग मातु जानकी, देह धरा एक कारण से ।।
तासों बैर तेयागु पिया मेरे जाय मिलो तन-मन-धन सें।
सांचे मातु पिता दोउ मूरति, हम जानों सब बेदनि सें ।।
तद्यपि नाहिं दिहों वैदेही, बिना लड़े सारंग घर सें।
जाके दूत आय एक बानर, जारि गए लंका गढ़ सें ।।
तासों सरबीर करू अभिमानी प्राण गमै हैं लड़ने सें।
नारि गमारि डरी अवही तुम नर बानर है भोजन सें ।।
भेजि दियों विधि कुम्भकरन कों भूखे हैं छव मासन से।
भागि आये जेहि बालि काँख से, ताहि हनों एकै सरसें ।।
हम जानों प्रभुताई तेहारो, गाल वजावहु औरन से।
राम बढ़ाई करत मेरी आगे, त्रियानिकालौ देशन सें ।।
इन्द्रजीत अस पुत्र हमारो, धूरि लहें तपसी वन सें।
जनक राय जब कियो प्रतिज्ञा, तब नहि लायों जनक पुरसें ।।
लाज गमाय चोर कहाये अपजस लिये तिहंपुर सें।
तेरे कहें प्राण कैसे त्यागोंसिया न दी हों बातन सें।
होनी होय सो होय रहेंगी लक्ष्मी पति रघुनाथन सें ।।

भजन - ४

आजु देखी यमुना तट यदुराई।
करि जल केलि किनारे आये, सखियन सेवा जनाई ।।
कोई पति बसन लै धोती, सुन्दर दिबो पिन्हाई।
कोई सखि चरन सरोरुह सुन्दर, धोए कर आनि बैठाई ।।
कोई चन्दन फूलन के माला, रचि रचि दिवो लगाई।
कोई मिसरी माखन दूध चीनी, मोदक मेवा खवाई ।।
कोई निर्मल जल खीरी भरि भरि, सरवत छानि पियाई ।।
कोई पानन के बीड़ा खिलाबत, कोई कर चौर डोलाई ।।
बैठे जोग जुगुति कर मोहन, लक्ष्मी पति गोपियन पछताई ।।

मिथिला की लगनी, बटगमनी, बारहमासा, समदाउन, इन सभी

गीतों का गायन करते थे। चरवाह-हरवाह जो साहित्य की सरसता से अनभिज्ञ रहते थे वे भी मांगन की लगनी एवं बिरहा पर झूम जाते थे।

लगनी गीत :-

"केकयी कुमति भली,
रामचन्द्र बन गेलकी आहोरामा
कौशल्या करुणमा नयना झझायेल रेकी"

वटगमनी :-

केलि भवन नहि जाएब सजनी गे
हमर वयस अति थोड़ सजनी गे।

बारहमासा :-

प्रथम मास अषाढ़ हे सखि,
सजि चलल जलधार यो।
एहि प्रीत कारण सेतु बान्हल,
सिया उदेश सिरिरामयो।

समदाउन :-

बड़ रे यतन सँ सियाजी के पोसलहुं
सेहो रघुवंशी नेने जाए।
लालें रंग डोलिया सबुज रंग ओहरिया
लागि गेल बतिसो कहार।
एक कोस गेली सिया,
दुई कोस गेली
तिसर कोस लागल पियास।
बाट रे बटोहिया कि तुही मोर भइया,
अम्माजी के कहब बुझाए।
हमर शपथ दय हुनि समझाएब,
जग रीति टारलो ने जाए॥

गुदरी बाबू जिनका प्रसंगवश उल्लेख कर चुका हूं उनके यहाँ एक समय माँगन का कार्यक्रम रखा गया था। उपस्थित लोगों ने मांगन से समदाउन गीत गायन हेतु फरमाइश की। मांगन ने समदाउन गीत गाना प्रारम्भ कर दिया। कुछ क्षण बाद उपस्थित लोगों की आंखों से अश्रु-बिन्दु गिरने लगे। ब्रह्म नारायण सिंह आंख पोछते हुए आदेश में माँगन से कहा- "गाते हो या रोते हो? इन शब्दों को कहते हुए मांगन के हाथ से तानपुरा ले लिया गायन बन्द हो गया। कार्यक्रम में अन्य लोगों के अलावे गुदरी बाबू, बाल मुकुन्द झा, वासुदेव उपाध्याय तथा ब्रह्म नारायण सिंह उपस्थित थे। इस स्थिति से ऐसा जान पड़ता है कि वास्तव में माँगन के गले में दर्द था जिस कारण श्रोताओं को विषय स्थिति में डाल दिया करते थे।

दरभंगा राज छोड़ने के बाद मांगन ने अनेक रईश एवं संगीत प्रेमी के यहां जाकर संगीत दान करते हुए उपार्जन किया। कदमकुआं पटना के श्री नरेश ने स्वीकार किया है कि मांगन का दर्शन पहले पहल उन्हें १९३६ ई० में हुआ। उन दिनों माँगन मदसरा के जमींदार और सगीत के अनन्य प्रेमी और जानकार श्री अलख नारायण प्रसाद जी द्वारा स्थापित शारदा संगीतालय (कदम कुँआ, पटना) में शिक्षक के रूप में कार्यरत थे। उस अवधि में संध्या समय श्री अलख नारायण प्रसाद जी की कदम कुआं स्थित कोठी पर प्रायः संगीत की बैठक होती थी जिसमें माँगन जी का गायन हुआ करता था। "शारदा संगीतालय में जबतक माँगन कार्यरत रहे उस अवधि में श्री नरेश ने जो अनुभव किया उसे मैं प्रस्तुत कर रहा हूं।

"श्री नर्मदेश्वर प्रसाद सिन्हा "श्री नरेश" का कहना है कि मांगनजी ने भातखण्डे की संगीत पुस्तकों से अधिकांश बंदिशें याद की थी। शारदा संगीतालय में जब वे थे तो यह देखा गया कि निजी अभ्यास के समय वे प्रायः भातखण्डे की पुस्तकों से वंदिशें निकाला करते और उनका रियाज करते। इसलिए ऐसा लगता है कि या तो राय बहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह ने भी इन्हें भातखण्डे की ही वंदिशें सिखायी थी या उनके यहां से हटने के बाद मांगन जी उनकी सिखायी वंदिशों को नहीं अथवा कम गाते थे। शारदा संगीतालय में पदस्थ रहने के समय माँगन जी वंदिश का स्थायी अन्तरा तो बहुत सुरीली आवाज में कहते थे किन्तु तान लेने के समय उनकी आवाज थोड़ी कर्कश हो जाती थी। इसका कारण यह था कि उन दिनों वे तान करते समय गला थोड़ा

दबा लेते थे। इस तरह तान में दाने तो निकलने लगते लेकिन आवाज थोड़ी विकृत हो जाती, किन्तु बाद में अथक रियाज के बल पर उनकी आवाज स्थायी अन्तरा कहने में और तान करने में भी इतनी सुरीली हो गयी थी कि वे रस की बौछार कर देते थे, वे अनिवार्य रूप से प्रतिदिन कम से कम सात - आठ घंटा रियाज जरूर करते थे। शारदा संगीतालय के दिनों में मैंने ऐसा स्वयं देखा। उन दिनों उनके रियाज का समय था, प्रातः ७ बजे से १२.३० - १ बजे दिन तक। भोजनोपरान्त थोड़ा विश्राम। पुनः ३ बजे अपरान्ह से ५ - ६ बजे संध्याकाल तक। उस समय संगीतालय में कोई छात्र एवं छात्रा था ही नहीं। सायंकाल ६ - ७ बजे से ९ बजे तक श्री अलख नारायण प्रसाद जी की पुत्री को माँगन जी संगीत सिखाते थे। बाकी समय में वे अपने रियाज के लिए पूरी फुर्सत में होते थे। श्री अलख बाबू के यहां आठ बजे रात्रि से पहले बैठक शुरु नहीं होती थी और रात एक बजे से पहले समाप्त भी नहीं होती थी।" श्री नरेश ने एक उदाहरण पेशकर यह सिद्ध किया है कि माँगन का गायन बहुत ही प्रभावशाली था। उन्होंने कहा हैं कि बात सन १९३९ - ४० की है। जब वे पटना कालेज के बी० ए० के एक छात्र थे। संगीत में उनकी रुचि रहने के कारण कामन रूम संगीत कक्ष के वे छात्र मंत्री थे एवं अध्यक्ष थे विख्यात इतिहासज्ञ डा० एस० पी० सरकार।

संगीत कक्ष में संगीत की शिक्षा देने के लिए मांगन जी के छोटे गुरु भाई श्री लखन सिंह नियुक्त थे। लखन सिंह राय बहादुर लक्ष्मी नारायण सिंह के यहां सर्व प्रथम सेवा कार्य के लिए रखे गये थे। इन्हें भी दरबार में संगीत की शिक्षा मिली। लखन सिंह पटना कालेज की सेवा कर पटना स्थित राजेन्द्र प्रसाद के निवास स्थान जाकर उनकी पौत्री को संगीत की शिक्षा देते थे। राजेन्द्र बाबू के राष्ट्रपति हो जाने के उपरान्त लखन सिंह ने दिल्ली जाकर उनसे भेंट की एवं अपनी जिविका हेतु याचना की। राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबू ने लखन सिंह को बिरला मन्दिर कलकत्ता में भजन - कीर्तन करने हेतु नौकरी दिलवा दी। पटना कालेज छोड़ कलकत्ता में ये कार्यरत रहे एवं २८-७-८४ में इनकी मृत्यु हो गई।

गायन एवं वादन दोनों में छात्रों को पटना कालेज में शिक्षा दी जाती थी एवं उनकी संख्या करीब तीस के लगभग थी। कालेज में वार्षिक समारोह होने

वाली थी। श्री नरेश को मांगन के पटना आने की सूचना मिली। उन्होंने अध्यक्ष से बिना आदेश प्राप्त किये ही मांगन से मिलकर उनसे अनुरोध कर समारोह में गायन हेतु अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी। उत्सव के दिन डा० सरकार ने नरेश से कार्यक्रम के बारे में पूछा तो नरेश ने बताया कि छात्रों के गायन के बाद लखन सिंह का गायन होगा एवं अन्त में मांगन का कार्यक्रम होगा तो डा० सरकार हैरान हो गये। डा० सरकार ने कहा मांगन बड़े उच्च कोटि के गायक हैं कहीं छात्र उन्हें हुट कर दिया तो वे कहीं मुँह दिखाने लायक नहीं रहेंगे।

कार्यक्रम शुरू हुआ। कार्यक्रमानुसार मांगन जी एक ऊँची मेज पर बैठे। उनके साथ संगीत करने के लिये थे बटुकजी झा एवं ब्रह्मनारायण सिंह। मांगन जी ने आँखें बन्द की (यह उनकी आदत सी थी) और भातखण्डे की ही पुस्तक की एक बंदिश, शुद्ध धैवत दिया हुआ मल्हार "चमके बिजुरिया गरजे मेहरवा, मतजा पियरवा, ठौर-ठौर, ठौर-ठौर चमके बिजुरिया" शुरू हुआ। एक तो यह विशेष प्रकार का मल्हार, दूसरे तानों की भरमार। उनके गायन में क्या जादू था कि हॉल में पीनड्राप साइलेंस जैसे लड़कों की सांस टंग गई हो। मांगन जी ने यह बंदिश एक घंटे तक गायी। उसके बाद जब उन्होंने इसे खत्म किया तो पाँच मिनटों तक लड़के जो हर्ष से पागल की तरह ताली बजाने लगे वह जैसे रुकने का नाम ही न ले। जब डा० सरकार ने उन्हें शांत होने को कहा तो वे शांत तो हुए मगर कई लड़के मेज की तरफ बढ़े। डा० सरकार के पूछने पर उन लोगों ने कहा कि वे एक गाना और सुनना चाहते थे। तब मांगन जी ने महाकवि विद्यापति रचित गीत— "सुतलि छलौ हम घरवा रे, गरवा मोतिहार" इतने भावभीने ढंग से गाया कि आँखों को सूखा रखना कठिन हो गया। जब बैठक समाप्त हुई तो लड़के हजार रोकने के बावजूद मांगन जी की मेज की तरफ टूट पड़े और उन्हें सचमुच हाथों-हाथ उठाकर कंधों पर बैठा लिया और उसी तरह हॉल से बाहर निकलकर सीढ़ियाँ उतरकर लड़कों ने उन्हें फिर गाड़ी (कार) में बिठाया और करबद्ध अनुरोध किया कि ऐसा दिव्य संगीत वे आगे फिर कभी उन्हें सुनायें। छात्रों के उत्साह से मांगन अतीव प्रसन्न थे। उन्होंने कहा कालेजी लड़कों के बीच गाने का यह उनका पहला अनुभव था जो बड़ा ही प्रियकर था। इस बैठकी के लिये मांगन जी को कुछ दिया भी नहीं गया लेकिन इसके लिये उन्होंने कुछ ख्याल भी नहीं किया। कहा था लड़कों

के बीच गाना था तो पैसों का क्या सवाल था।

"श्री नरेश" के शब्दों में मांगन जी शास्त्रीय तो गाते ही थे, ठुमरी भी बहुत बेहतरीन गाते थे। उन्होंने स्वीकार किया है कि जहाँ तक माँगन को वे समझ पाये मांगन शास्त्रीय राग-रागिनी की अदाकारी भी ठुमरीनुमा मिजाज से करते थे। इसी कारण उनके शास्त्रीय गायन में शास्त्र की रुक्षता अथवा नीरसता नहीं रहती थी बल्कि राग के मर्म तथा बंदिश के भाव का रस ओत-प्रोत रहता था।

वयोवृद्ध ध्रुपद गायनाचार्य पदम श्री राम चतुर मल्लिक के शब्दों में—"मांगन एक सरस, सरल एवं मधुकंठ प्राप्त गायक" थे। उन्होंने यह भी कहा है कि मांगन गम्भीर गायन में पटु नहीं थे। साथ ही कठिन राग, तान एवं सरगम उपस्थित करने में वे सिद्ध नहीं थे। मल्लिक जी का कथन है कि राजा विश्वेश्वर सिंह मांगन के गायन की कमजोरी को जानते थे तभी तो उन्हें महत्वपूर्ण आयोजन में सीधे-साधे गाने के लिये आदेश दिया करते थे।

श्री मल्लिक ने कहा है कि निम्नलिखित गीत मांगन के गले से सुन्दर ढंग से निकलता था। जो श्रोता को मंत्र-मुग्ध कर देता था। पद उन्हें आज भी पूर्ण रूप से स्मरण हैं :—

"सपने में आये साजन पलंग पर,
बहियां पकड़ के लिपट गई हो।
आये वलम जब पलंग पर मेरे।
मैं धनी थी रस - रंग बोरे।
सारा बदन हमरे झिकझोड़े,
बिछल बिछौना सिमट गयो रे ॥

उपर्युक्त गीत मांगन ताल कहरवा या दादरा ताल में प्रस्तुत किया करते थे।

मांगन के दरभंगा राज छोड़ने के बाद राजा विश्वेश्वर सिंह को अपार कष्ट हुआ था। उस समय राजा साहेब के मोसाहेब में अन्य व्यक्तियों के अलावा श्री दया बाबू श्री महारुद्र झा, श्री बलभद्र बाबू एवं श्री राम चतुर मल्लिक मुख्य थे।

कार आयोजन में बुलाये जाते थे उन्हें अच्छी बिदाई दी जाती थी एवं वे सम्मान पूर्वक विदा किए जाते थे।

इसी अवसर पर प्रत्येक दिन प्रात: संगीत की गोष्ठी होती थी। संयोग से इस अवसर पर बद्रीनाथ धाम के एक महान संत उपस्थित हुए थे। मांगन को ही भजन प्रस्तुत करना था उस प्रात: में। मांगन का भजन उसने दो दिन सुन लिया था। सुनने के पश्चात सन्त ने कहा मांगन विशेष दिन तक अब नहीं रह पायेंगे। ऐसी भविष्य बाणी सुनकर कुमार श्यामा नन्द सिंह चकित हो गये एवं अपनी जिज्ञासा उन्होंने सन्त जी से प्रकट की। सन्त जी ने कहा माँगन को नाद ब्रह्म की प्राप्ति हो चुकी है।

कार्यक्रम समाप्त कर माँगन जब घर पहुंचे तो इन्हें बद्रीनाथ धाम जाने की रट लग गई। जाने की अपनी अभिलाषा ब्रह्म नारायण सिंह से माँगन ने प्रकट की। ब्रह्म नारायण सिंह ने उत्तर दिया बद्रीनाथ धाम जाने का अनुकुल समय नहीं है। यह बात सुनकर मांगन को बड़ा ही कष्ट हुआ। फिर आज्ञा का पालन कर यात्रा के इरादा को रोक दिया। मांगन की इसी चिन्तन की घड़ी में उनके प्रिय शिष्य बटुकजी झा (सिहोल निवासी) ने अपने किसी मित्र से आरा मिलने जाने की बात कही। मांगन तो स्वयं घबराये थे वे चाहते थे कि हमारे सभी व्यक्ति उनके साथ रहे। उन्होंने बटुक को जाने से मना किया। बटुक मांगन की बात न मान जाने का ही अपना फैसला सुनाया। माँगन ने कहा जाना है तो जाओ मगर पछताओगे। यही कारण था की बटुक को फिर मांगन के दर्शन नहीं हो पाये।

मांगन जी बीमार हो गये। उनपर कालाजार का भयंकर आक्रमण हुआ। बीमारी लाइलाज रही। अखिल भारतीय संगीत सम्मेलन गया हेतु ये जाने की स्वीकृति पत्र नहीं भेजना चाहते थे क्योंकि वे जीवन के प्रति उदासीन हो चुके थे। उन्होंने शिष्यों से स्वीकृति पत्र नहीं भेजने को कहा कारण नहीं पहुंच पाने पर उन्हें बदनामी की आशंका हो गयी थी। परिणाम भी सामने आ गया। कार्यक्रम से दो-तीन दिन पूर्व कार्तिक पूर्णिमा (१९४४) के शुभ दिन में इस आसार-संसार से वे प्रयाण कर गये। उपेन्द्र प्रसाद यादव की जांघ पर उनका माथा रखा था। संध्या ५ बजे उनका प्राण वियोग उनके निवास स्थान पर हो गया। समाचार सुनते ही सारा पचगछिया शोकाकुल हो गया। पचगछिया के राजा साहेब के परिवार के सदस्य स्व॰

जवाहर साहेब, मानिक साहेब (स्व० लक्ष्मी नारायण सिंह) के भाँजे सभी दौड़े एवं मांगन के अन्तिम दर्शन किये। सम्पूर्ण पचगछिया में शोक से चूल्हे नहीं जलाये गये। पूर्णिमा की उस चन्द्र किरण में मिथिला की ललनाओं की परम्परागत त्योहार 'श्यामा-चकेवा" उत्सव भी नहीं मनाया गया। ९ बजे रात्रि में सम्पूर्ण ग्रामीणों की उपस्थिति में मांगन के निजी आम की गाछी में आम्र वृक्ष के साये में उनका अन्तिम संस्कार सम्पन्न कर दिया गया।

दूसरे दिन प्रातः ब्रह्म नारायण सिंह, उपेन्द्र यादव एवं धर्म नारायण सिंह सहरसा तार घर जाकर हित अपेक्षित को तार द्वारा सूचना भेज दी।

कुमार श्यामानन्द सिंह बनैली स्टेट, चम्पानगर पूर्णिया को भी मांगन की यह हृदय विदारक सूचना मिली। मांगन के जितने शुभचिन्तक थे सबको इस घटना की सूचना दे दी गई। मृत्यु की सूचना प्रमुख पत्र "आर्यावर्त" में भी प्रकाशित हुई जैसा उनके प्रिय शिष्य श्री उपेन्द्र प्रसाद यादव का कहना है। गया का आयोजित अखिल भारतीय संगीत सम्मेलन अपनी निश्चित तिथि को आरम्भ हुआ। मांगन की मृत्यु की सूचना सम्मेलन में पहुंच चुकी थी। आयोजन की स्थिति गमगीन हो गई। बिहार से उस गायक सपूत की श्रद्धांजलि हेतु राष्ट्रगायक ओंकार नाथ ठाकुर ने कार्यक्रम आरम्भ से पहले मंच पर खड़े होकर मांगन की दिवंगत आत्मा की शान्ति हेतु २ मिनटों का मौन धारण करने के लिए प्रस्ताव पारित किया। उपस्थित सारे लोगों ने भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। ठाकुर जी मांगन से बड़े ही प्रभावित थे। उस मायूस घड़ी मे ठाकुर जी ने गायन में राग मालकोश ही रखा। मालकोश राग का आलाप मन्द, मध्य एवं तार तीनों सप्तकों में उन्होंने भीड़, गायन के साथ प्रस्तुत करना सुरू किया कि श्रोता निस्तब्ध हो गये। गायन के शब्द ऐसे थे कि श्रोता की आंखों से आंसू छलक पड़े। मांगन की मर्माहत सूचना ने जैसे और भी गम्भीर रूप ले लिया, ऐसा प्रतीत होता था। एक तो मालकोश राग दूसरे दर्द भरी आवाज दोनों ने बहुतों को रुला दिया। पंडित जी तो स्वयं गायन में विभोर थे परन्तु जब श्रोता की ओर दृष्टिपात किया तो सभी के हाथों में रुमाल या गमछा देखा जिससे आँखों को बार-बार पोछते पाया। भीगी पलकें, मुख पर विशेष मुद्रा, ठाकुर जी ने स्थिति को भली-भाँति भांप लिया। गम्भीर ख्याल गायन के पश्चात ठाकुर जी ने भजन "योगी मतजा - २ पाँव परूँ में तोरी" प्रस्तुत किया। श्रोता की मनोदशा

बदली फिर सम्मेलन का आनन्द सबने लिया।

श्राद्ध भी न हो पाया था कि मांगन के परिवार एवं समाज के लोगों ने मृत्यु की सूचना दरभंगा के राजा विश्वेश्वर सिंह को देने के लिए उनके पुत्र लड्डूलाल से कहा।

दरबार लगा हुआ था। राजा साहेब के साथ सभी दरबारी अन्य दिनों की तरह रस रंग में डूबे थे। एक मोसाहेब ने जाकर कहा कि मांगन का पुत्र लड्डू सरकार से मिलना चाहता है। राजा साहब मन ही मन अत्यन्त प्रसन्न हुए उन्हें ऐसी कल्पना हुई कि मांगन स्वयं आने में संकोच अनुभव कर पुत्र द्वारा दरबार आने की आज्ञा चाहता है।

लड्डू लाल को दरबार में आने की आज्ञा मिली। राजा साहेब को देख लड्डू हाथ जोड़ें खड़ा रहा। राजा साहेब ने पूछा मांगन ठीक तो है न? इस प्रश्न को सुनते ही लड्डू की दोनों आंखें भर आई। वाणी से अवरुद्ध हो गया। गले में पड़े उतरी के फंदे को दिखाते हुए उत्तर दिया "वे अब नहीं हैं"।

राजा साहेब स्तब्ध रह गये। दरबार स्थगित हो गया। सभी लोग आश्चर्य में एक दूसरे की ओर शंका की नजर से देखने लगे। राजा साहेब ने माँगन के वियोग में उस रात अन्न ग्रहण नहीं किया, उन्हें नींद नहीं आई। आखें खुली थी, ध्यान में सिर्फ माँगन ही था और कुछ नहीं। सुबह हो गई। राजा साहेब ने लड्डूलाल को बुलवाया। श्राद्ध तिथि की जानकारी ली। कर्मचारी को बुलवाया कोर्ट से मिली डिग्री की कापी लाने का आदेश दिया।

डिग्री की कापी राजा साहेब ने लड्डू लाल के सामने फाड़ डाली। श्राद्धकर्म के लिये लड्डू को ५०० रुपये देने का आदेश राजा साहेब ने तुरन्त दिया। श्राद्ध के बाद लड्डू लाल को मिलने के लिये आज्ञा मिली।

मांगन के गायन की विशेषता :- मांगन की गायकी में गोआलियार घराना की स्पष्ट छाप थी। तान, बोलतान, बहलाव, सरगम, आकार युक्त गायकी, तीनों सप्तक में समान अधिकार, ख्याल, ठुमरी में पूरब अंग का गुण, भजन गायन में सिद्धि प्राप्त, विद्यापति गीत के स्वरलय निर्धारक तथा मिथिला प्रचलित प्राचीन गीत उपस्थापन में अद्वितीय, सोलह मात्रा में तिलबाड़ा, पंजाबी त्रिताल एवं तीन ताल उनके गायन का मुख्य ताल था। द्रुत लय में तराना, तिरवट, चतुरंग गाते थे। मृदंगवादक के संगत में ध्रुपद धमार गाते थे। विशिष्ट प्रकार की राग माला जानते थे।